चन्दामामा
अक्तूबर १९७९

हाँ बच्चो! ये खुशखबर तुम्हारे लिए है. अब हम 'और अच्छे' हो गये हैं (यानी पहले से कहीं ज़्यादा अच्छे). दरअसल आज हम भी उतने ही खुश हैं जितने कि तुम. जानते हो क्यों? क्योंकि हमने अपने नये इंटरनेशनल रैपर में तुम्हारी खुशियों को समेट लिया है.

इतना ही नहीं बच्चो! अब हमने इसकी महक और स्वाद में भी थोड़ा सुधार कर दिया है जिससे कि बहुत देर तक तुम इसका मज़ा ले सको. नये NP डबल बबल गम से तुम अब ज़्यादा बबल बना सकोगे, ज़्यादा मज़ा ले सकोगे, अब तो तुम समझ ही गये होगे कि हम 'बहुत अच्छे' कैसे हो गये हैं—यानी 'सबसे अच्छे' क्यों हैं.

(हर पॅकेट में फॉरेन कार की रंगबिरंगी तस्वीर भी है; तो फिर हो जाओ तैयार—रोमांचक सैर के लिए!)

IS 6747

दि नॅशनल प्रॉडक्ट्स

१३५, कवल बिरासान्द्रा, बेंगलोर

NP बबल गम—
क्वालिटी के प्रतीक आइ एस आइ के निशानवाली एकमात्र बबल गम.

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनाम ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०

बिन्दुपूर्ण रेखाके साथ काटिये

केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नीचें दिये गए पते पर भेजिए **P.B. No. 9928,** COLABA, Bombay-400 005.

परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.. Age..................

Address...

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

CONTEST NO.11

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: *31-10-1979*

Vision

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

"कठिन कार्य" नामक कहानी में यह समझाने का प्रयत्न किया गया है कि इच्छाओं पर विजय पाना सब से बड़ा कठिन कार्य है। समस्त को त्यागनेवाला सन्यासी भी साधारण मानव के रूप में जीवन-यापन किये बिना सन्यासी का वेष धरकर यह कामना करता है कि दुनिया उसे एक सन्यासी के रूप में पहचाने।

अमर वाणी

कंटकानां, खलानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया,
उपानन्मुख भंगो वा, दूर तो वा विसर्जनम् ।।

[दुष्टों और कांटों के साथ दो प्रकार से प्रतीकार लिया जा सकता है, एक तो चप्पल से मुंह पर दे मारना और दूसरा निकालकर दूर फेंकना।]

वर्ष : ३२   अक्तूबर १९७९   अंक : २

एक प्रति : १-२५   ::   वार्षिक चन्दा : १५-००

सि. शेकन्ना, रायचूर (कर्नाटक)

प्रश्न : गरमी के मौसम में थोड़ी दूर से देखने पर गैस स्टौ जलता हुआ सा प्रतीत होता है, सिर्फ़ गरमी के मौसम में ही वह ऐसा क्यों दीखता है?

गरमी के मौसम में जमीन तपती है, इस कारण जमीन के समीप में स्थित वायु गरम होकर हल्की हो ऊपर उड़ जाती है। जहाँ ज्यादा गरमी नहीं होती है, उस ऊँचाई में वायु ज्यादा भारी होती है, इस कारण नीचे उतर आती है। यह दो प्रकार की हवा जब आमने-सामने होती है, उनसे प्रसारित होनेवाली रोशनी में भिन्नता होने के कारण दूर की चीजें प्रकंपित मालूम होती हैं। जलनेवाले स्टौ के ऊपरी भाग में यों दिखाई देने का कारण भी यही है। ठण्डी वायु के भीतर से फूटनेवाली कांति तप्त वायु में प्रवेश करते ही वक्रीकरण को प्राप्त होती है।

सि. सुधा, नेल्लूर (आन्ध्र)

प्र : नींद के माने क्या है? क्या आँखें बंद करने पर ही नींद आती है?

उ : हमारे मस्तिष्क की ऊपरी परत में कई "ज्ञान" केन्द्र होते हैं। हमारे जागते वक्त बाहरी वायुमण्डल में जो परिवर्तन होते हैं–दृश्यों व ध्वनियों में होनेवाले–उनसे स्पंदित होते रहते हैं। मस्तिष्क की ऊपर की परतों को विश्राम मिलने पर ही हम सो सकते हैं, वरना नहीं; इसलिए आँखें बंद किये बिना हम सो नहीं पाते हैं।

पी. वी. सुंदर कुमार, बरंपुरम (ओरिस्सा)

प्र : "पंखा" जब नहीं घूमता, तब उसके डैनों के पीछे की चीजें हमें दिखाई नहीं देतीं, लेकिन जब घूमता है, तब वे स्पष्ट दीखती हैं। इसका क्या कारण है?

उ : "पंखे" के डैनों के बीच की खाली जगहों से हम उसके पीछे की चीजों को उसके घूमते वक्त देखते हैं। एक बार जो दृश्य हमारी आँखों में आ जाता है, वह एक सेकण्ड के दसवें हिस्से तक के समय तक हमारी आँख से अदृश्य नहीं होता। इस बीच पंखे का डैना पार कर जाता है। इस कारण हम पंखे के पीछे की चीज को देखते हैं। इससे बढ़िया उदाहरण यह है कि जब हम आँखों से काम लेते हैं, तब हम बराबर आँखों की पलकें मारते रहते हैं, पर हमारे मन में उस वक्त यह भाव पैदा नहीं होता कि हम जिस चीज को देखते हैं, वह अदृश्य हो पुनः हमें दिखाई देगी।

[७५]

पुनर्जन्म प्राप्त सिंह

एक नगर में चार ब्राह्मण मित्र थे। उनमें से तीन ब्राह्मण समस्त शास्त्रों के ज्ञाता थे, पर उनमें दुनियादारी ज्ञान का अभाव था। चौथा व्यक्ति शिक्षित न था, पर दुनियादारी का अनुभव रखता था।

एक दिन चारों मित्रों ने विचार-विमर्श करके यह निर्णय लिया—"हमने शिक्षा प्राप्त की, लेकिन इसका प्रयोजन ही क्या रहा? देशाटन करके अनेक राजाओं को संतुष्ट कर हमें पुरस्कार प्राप्त करना है।"

थोड़ी दूर जाने पर उनमें से बड़े व्यक्ति ने यों कहा—"हम में से एक व्यक्ति दुनियादारी का अनुभव तो रखता है, पर पांडित्य नहीं रखता। पांडित्य के अभाव में केवल दुनियादारी का ज्ञान रखने से कोई भी राजा उसका सम्मान नहीं करेंगे। बाक़ी हम तीनों जो पुरस्कार पायेंगे, उनमें से उसे कोई हिस्सा नहीं मिलेगा। इसलिए वह यहीं से घर लौट सकता है।"

दूसरे पंडित ने दुनियादारी का अनुभव रखनेवाले से कहा—"भाई, तुम पंडित न हो, इसलिए घर लौट जाओ।" पर तीसरे पंडित ने समझाया—"भाइयो, यह भी हमारे साथ चला आया है, इसलिए इसे वापस घर भेजना उचित नहीं है। हम चारों बचपन के साथी रहे, इसलिए इसे भी हम अपने साथ ले जायेंगे और हमारी कमाई में से थोड़ा हिस्सा इसे भी दे देंगे।"

इस पर बाक़ी दोनों ने मान लिया। तब चारों ने अपनी यात्रा चालू की।

थोड़े दिन की यात्रा के बाद उन लोगों ने जंगल में एक मृत सिंह की हड्डियाँ देखीं। उन्हें देख एक पंडित बोला—"मित्रो, अब

हम अपनी अपनी विद्याओं का प्रदर्शन कर सकते हैं। हम लोग अपनी विद्याओं की शक्ति के बल पर इस सिंह को जिला देंगे। मैं इस सिंह की हड्डियों को सही जगह जोड़ सकता हूं।"

दूसरे पंडित ने कहा—"मैं सिंह की खाल, मांस पेशियाँ तथा रक्त की सृष्टि कर सकता हूं।"

"अगर तुम दोनों ये कार्य कर सकते हैं तो मैं सिंह के भीतर प्राण फूंक सकता हूं।" तीसरे पंडित ने कहा।

फिर क्या था, एक ने सिंह के कंकाल को जोड़ दिया, दूसरे ने सिंह में खाल, मांसपेशियाँ तथा रक्त पैदा किया, तीसरा व्यक्ति उसके भीतर जान फूंकने जा रहा था, तब चौथे ने उसे रोकते हुए कहा—"यह तो खूंख्वार जानवर है। इसके भीतर जान फूंकने से यह हम सब को खा डालेगा, इसलिए इसमें प्राण मत फूंको।"

ये बातें सुन तीसरा व्यक्ति नाराज़ होकर बोला—"अरे मूर्ख! पहले दो व्यक्तियों ने अपनी अपनी विद्याओं का प्रदर्शन किया तो अब मुझे अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने से मना करते हो?"

पर दुनियादारी का अनुभव रखनेवाला बोला—"भाई, तुम अपनी इच्छा के अनुसार ही करो, पर मेरे पेड़ पर चढ़ने तक रुक जाओ।" यों कहते वह पेड़ पर चढ़ बैठा।

इसके बाद तीसरे पंडित ने सिंह के भीतर प्राण फूंका। जीवित होते ही सिंह गर्जन करके उसकी रक्षा करनेवाले तीनों पंडितों को मार डाला। सिंह के चले जाने पर दुनियादारी का ज्ञानी पेड़ से उतर पड़ा और सुरक्षित अपने घर पहुँचा।

अतिलोभी ने अत्यंत लोभी को यह कहानी सुनाकर समझाया—"सुनो, एक ही कमल के द्वारा तालाब पुष्करिणी नहीं बन सकता, वैसे ही इस एक कहानी की नीति पर्याप्त नहीं है। ऐसी कहानियाँ अनेक हैं।" यों उसने एक और कहानी सुनाई।

शिक्षित मूर्ख

एक जमाने में उज्जैन में चार ब्राह्मण बालकों के बीच गहरी दोस्ती थी। चारों ने आपस में चर्चा करके यह निर्णय किया कि देशाटन करके विद्वान बने। वे चारों कन्याकुब्ज नामक एक नगर में पहुंचे और एक विख्यात गुरु के यहाँ बारह वर्ष तक बड़ी लगन के साथ शिक्षा प्राप्त की।

बारह साल बाद वे अपनी शिक्षा पूरी करके गुरु की अनुमति लेकर अपनी अपनी पुस्तकों के साथ उज्जैन के लिए रवाना हुए। उन लोगों ने सोचा कि नये मार्गों पर चलकर नये प्रदेश देख सकते हैं। यों विचार कर अपने परिचित पथ को छोड़ नये रास्ते से उज्जैन के लिए निकल पड़े।

थोड़ी दूर जाने पर मार्ग दो रास्तों में बंट गया; उनकी समझ में न आया कि किस रास्ते से उन्हें आगे बढ़ना है। एक ने कहा—"मेरी पुस्तक तो यही बताती है कि शिक्षित व्यक्ति का कर्तव्य अपने आप मालूम हो जाता है। उसे दूसरों से जानने की जरूरत नहीं होती। मगर मूर्ख व्यक्ति हमेशा दूसरों की सहायता पर निर्भर रहता है। इसलिए हमें किस ओर चलना है, यह प्रश्न दूसरों के सामने रखने की जरूरत नहीं है। यह निर्णय तो हमें खुद कर लेना चाहिए।"

इसके बाद चारों ने उस रास्ते पर बैठकर अपनी अपनी पोथियाँ खोलीं। उसी समय एक मार्ग से होकर एक शव के साथ कई लोग आ पहुँचे।

तब चारों में से एक ने कहा—"भाइयो, हमारी समस्या हल हो गई है। मेरी पुस्तक यह बताती है कि जिस रास्ते से अनेक लोग चलते हैं, उसी रास्ते से तुम भी चलो। इसलिए हम इन लोगों के रास्ते से ही चल पड़ेंगे।"

उनकी यह समस्या बड़ी आसानी से हल गई। इस पर बाक़ी तीनों खुशी में आकर उछल पड़े। वे लोग शव के पीछे चलकर शीघ्र श्मशान में पहुँचे। रास्ता

वहाँ जाकर बंद हो गया था। वे शिक्षित व्यक्ति चिता से थोड़ी दूर खड़े हो सोचने लगे कि अब हमें क्या करना होगा। वहीं पर उन्हें एक गधा खड़ा हुआ दिखाई दिया।

"इसके पीछे कोई अर्थ ज़रूर होगा! हमारे साथ यह गधा भी खड़ा हुआ है! इसका क्या मतलब होगा?" एक ने पूछा।

इस पर दूसरे ने झट अपनी पोथी खोल डाली और चिल्ला उठा–"हाँ, बात मेरी समझ में आ गई। यह गधा हमारा मित्र है! मेरी पुस्तक में लिखा हुआ है 'राजद्वारे, श्मशाने च यस्तिष्ठति बांधवः' इसलिए हम लोग स्नेहपूर्वक इस गधे का परामर्श करेंगे!"

तब एक ने जाकर प्रेम से गधे को अपने गले से लगाया। दूसरे ने गधे को चूम लिया, तीसरे ने उसके पैर धोये! चौथे ने 'वाह, प्यारे! कितने दिन बाद तुम्हारे दर्शन हुए!' यों कहते आनंद बाष्प गिराये।

उनका यह व्यवहार देख शव के साथ श्मशान में आये हुए लोग उस शोक की हालत में भी ठठाकर हँस पड़े।

उसी समय एक ऊँट अपने मालिक की आँखों में धूल झोंककर उस ओर दौड़ते आया। ऊँट को देख एक पंडित ने पूछा–"इसके आगमन का क्या अर्थ होगा?"

दूसरे ने समझाया–"मित्रो! मेरी पुस्तक में लिखा है–'धर्मस्य त्वरिता गतिः' यह ऊँट दौड़ा आया हुआ है, इसलिए यह 'धर्म' होगा।"

तीसरे ने कहा–"मेरी पुस्तक में बताया गया है–'इष्टं धर्मेण योजयेत' याने हमारे पसंद की वस्तु को धर्म के साथ जोड़ना होगा। इसलिए हम लोग गधे और ऊँट को जोड़कर बाँध देंगे।"

इसके बाद चारों ने मिलकर बड़ी मुश्किल से गधे और ऊँट को एक रस्से से बाँध दिया और इस प्रयत्न में सब ने उनकी लातें खाईं। इसे देख श्मशान में आये हुए लोग खिल-खिलाकर हँस पड़े।

भल्लूक मांत्रिक

[१५]

[कालीवर्मा ने अपने अनुचरों के साथ दुर्ग में प्रवेश किया। माया मर्कट ने उन्हें एक कटा हुआ सिर दिखाया। उन लोगों ने भांप लिया कि वह सिर राजा दुर्मुख का नहीं है और उसकी खोज करने लगे। तब दुर्मुख सभा मण्डप में सिंहासन पर बैठे दिखाई दिया। दूसरे ही क्षण बधिक भल्लूक हाथी पर से मण्डप में कूद पड़ा। बाद...]

बधिक भल्लूक को सभा मण्डप में कूदते देख कालीवर्मा ने होनेवाले खतरे को भांप लिया और हाथी पर सवार जंगली युवक को आदेश दिया–"अबे जंगली युवक, तुम झट जाकर बधिक भल्लूक को राजा दुर्मुख का सर काटने से रोक दो।" फिर बधिक भल्लूक से उच्च स्वर में बोला–"बधिक भल्लूक! मैं अभी आ रहा हूँ। तुम राजा दुर्मुख का वध न करो।" इसके बाद वह तेजी के साथ सीढ़ियों को पार करते हुए सभा मण्डप की ओर दौड़ पड़ा।

कालीवर्मा की चेतावनी सुनते ही जंगली युवक हाथी पर से कूद पड़ा, दौड़े-दौड़े जाकर बधिक भल्लूक को रोककर खड़े हो बोला–"भल्लूक साहब! जल्दबाजी में न आओ। कालीवर्मा साहब राजा का सर काटने से मना कर रहे हैं।"

बधिक भल्लूक विस्मय में आकर बोला–"अपने को अपमानित करनेवाले इस राजा के सर को काट लाने का भल्लूक मांत्रिक ने तो आदेश दिया था न? उनकी आज्ञा का पालन न करूँ तो वे फ़िर मुझे भालू के रूप में बदल डालेंगे!"

इस बीच वहाँ पर कालीवर्मा आ पहुँचा, सिंहासन में निश्चेष्ट बैठे हुए राजा दुर्मुख की ओर देख चकित होकर बोला–"आखिर इस राजा के लिए क्या हो गया है? यों आँखें बंदकर ये निश्चल क्यों बैठे हैं!"

बधिक भल्लूक ने अपने परसु को कंधे पर रखकर पूछा–"कालीवर्मा साहब! आप की क्या आज्ञा है? क्या मैं इस राजा का सर न काटूँ?"

इस पर कालीवर्मा ने दुर्मुख के समीप जाकर कहा–"भल्लूक! ऐसा मालूम होता है कि तुम्हारे द्वारा सर काटने के पहले ही दुर्मुख ने अपने प्राण त्याग दिये हैं। आखिर क्या हुआ होगा? परसु को लेकर तुम्हारे द्वारा उसकी ओर बढ़ते देख कहीं भय के मारे उसके दिल की धड़कन बंद तो नहीं हो गई?"

"बधिक भल्लूक ने दुर्मुख का सर काट तो नहीं दिया है न?" "ये शब्द कहते भल्लूक मांत्रिक वहाँ पर आया, सिंहासन में निश्चल पड़े राजा को देख कहा–"बेचारे राजा दुर्मुख जान के डर से बेहोश हो गया होगा, इसे होश में लाना है।" फिर वह अपनी तलवार को उसके कंधे से छुआकर बोला–"राजा दुर्मुख! होश में आ जाओ। तुम्हें जान का कोई डर नहीं है।"

इसके दूसरे ही क्षण दुर्मुख ने आँखें खोल दीं, अपने हाथों से सर को टटोलकर देखते बोला–"ओह, मेरा सिर कैसा मज़बूत है। बधिक भल्लूक के परसु की चोट खाकर भी ज्यों का त्यों है।"

ये बातें सुन सभी लोग जोर से हँस पड़े। दुर्मुख घबराकर सिंहासन से उठ

खड़ा हुआ और बोला–"ओह, कालीवर्मा साहब, मांत्रिक लोग सब यहीं पर हैं! एक बार और सिंहासन पर बैठने की मेरी इच्छा पूरी हो गई। अब मेरा सिर कट भी जाय, मुझे कोई चिंता नहीं है।"

इसके बाद कालीवर्मा दुर्मुख के कंधे पकड़कर उसे सिंहासन पर बिठलाकर बोला–"राजा दुर्मुख, तुम इस वक़्त हमारे मित्र हो! अब तक जो कुछ हुआ है, उसे भूल जाओ! तुम्हारे क़िले पर क़ब्ज़ा करनेवाले सामंत सूर्यभूपति और मेरे गुरु भल्लूक मांत्रिक के मंत्र दण्ड को अपहरण करनेवाला माया मर्कट अब दोनों एक हो गये हैं। सब से पहले हमें उन्हें बन्दी बनाना होगा।"

कालीवर्मा के मुँह से ये बातें सुनकर राजा दुर्मुख खुशी से भर उठा। सिंहासन पर से उठकर तेजी के साथ सभा मण्डप के सामने आया, तलवार उठाकर उच्च स्वर में बोला–"सुन लो, उदयगिरि के राजा मैं तुम लोगों को आदेश देता हूँ कि मेरे विश्वासपात्र सभी सैनिक तक्षण यहाँ पर आ जाओ! जो लोग मेरे सामने नहीं आते, उन्हें राजद्रोही मानकर उनके सिर कटवा देंगे।"

बधिक भल्लूक मण्डप की छोटी दीवार पर खड़े हो परसु चमकाते बोला–"अबे, क़िले में इधर-उधर किसी कोने में छिपे सैनिको, क्या तुम लोगों ने राजा दुर्मुख की आज्ञा सुन ली है? तुम सब लोग अभी यहाँ पर आ जाओ।"

इसके दूसरे ही क्षण से क़िले के सभी प्रदेशों से सैनिक सभा मण्डप के सामने आने लगे। चार-पाँच मिनट बाद कालीवर्मा ने उन सब को गिनकर राजा दुर्मुख से पूछा–"राजा दुर्मुख, तुम्हारे सारे सैनिक चालीस से ज्यादा नहीं हैं। उदयगिरि के राजा बने हुए तुम्हारा सैनिक-बल क्या यही है?"

राजा दुर्मुख लज्जा से सर झुकाकर बोला–"कालीवर्मा, लगता है कि सामंत

सूर्यभूपति ने धन का लोभ दिखाकर मेरे सारे सैनिकों को अपने पक्ष में कर लिया है। सब से पहले हमें उस द्रोही को ढूंढकर बन्दी बनाना होगा।"

कालीवर्मा ने भल्लूक मांत्रिक की ओर सर घुमाकर पूछा–"गुरुजी, आपकी क्या आज्ञा है?"

भल्लूक मांत्रिक सभा मण्डप की छोटी दीवार से सटकर खड़े हो क़िले की दीवारों की तरफ़ ताक रहा था। उसे अपने मंत्र-दण्ड के खोने का बड़ा दुख था। अलावा इसके यदि वह इस वक़्त उस प्रदेश को छोड़कर चला जाएगा तो राजा दुर्मुख दुश्मन के द्वारा मुसीबतों में फंस जाएगा। साथ ही इस हालत में कालीवर्मा भी गुरु भल्लूकपाद के प्रदेश में जाने से इनकार कर सकता है।"

भल्लूक मांत्रिक यों विचार करते कालीवर्मा से बोला–"हे मेरे शिष्य कालीवर्मा, मेरी आज्ञा की बात फ़िलहाल रहने दो! यह बताओ, तुम आखिर क्या करना चाहते हो?"

यह सवाल सुनकर कालीवर्मा अचरज में आकर बोला–"गुरुजी, यह क्या पूछ रहे हैं? एक बार आपने अपने गुरु के भल्लूकपाद पर्वतों तक चलने को कहा था। क्या यह बात भूल गये?"

यह उत्तर सुनकर भल्लूक मांत्रिक बड़ा खुश हुआ और बोला–"कालीवर्मा, तुम्हारी गुरुभक्ति प्रशंसनीय है। मेरे गुरु भल्लूक पाद किसी तांत्रिक की वजह से फिलहाल मुसीबत में फंसे हुए हैं। उन्हें तुम जैसे साहसी व्यक्ति के द्वारा सहायता की अपेक्षा है। इसके बदले में तुम क्या चाहोगे?"

कालीवर्मा ने पल भर सोचकर कहा–"गुरुजी! पुरस्कार की बात फिर सोचेंगे। राजा जितकेतु ने मुझे जब शिरच्छेद का दण्ड दिया था, उस वक़्त आपने सिरस वन में मेरी बड़ी मदद की थी। उसी वक़्त मैंने आप को वचन दिया था कि सब

तरह से मैं भी आप की मदद करूँगा। अब आज्ञा दीजिए कि मुझे इस वक़्त क्या करना होगा।?"

"तब तो तुम्हें मेरे साथ ब्रह्मपुत्र नदी के उद्गम स्थानवाले प्रदेश में स्थित भल्लूकपाद पर्वतों में चलना होगा।" भल्लूक मांत्रिक ने कहा।

राजा दुर्मुख आपाद मस्तक कांपकर बोला—"मांत्रिक प्रभू! लगता है कि आप मेरी बात बिलकुल भूल गये हैं। इन थोड़े से सैनिकों के साथ एक राजा के रूप में शासन करना मेरे लिए असंभव है। मैं भी आप के साथ भल्लूकपाद पर्वतों में चलूंगा।"

भल्लूक मांत्रिक कुछ कहने को था, तभी बधिक भल्लूक अपने परसु को जमीन पर फेंककर रोते हुए बोला—"साहब! मेरा क्या हाल होगा? आप सबके यहाँ से चले जाने के बाद मेरे पुराने मालिक राजा जितकेतु अपनी आज्ञा का तिरस्कार करने के अपराध में जंगली जानवर की भांति मेरा शिकार करेंगे। इसलिए मैं भी यहाँ रहना नहीं चाहता। मुझे भी आप लोग अपने साथ ले जाइए।"

इस पर भल्लूक मांत्रिक मंदहास करके बधिक भल्लूक का कंधा थपथपाकर बोला—"बधिक भल्लूक! तुम डरो मत! यह मत
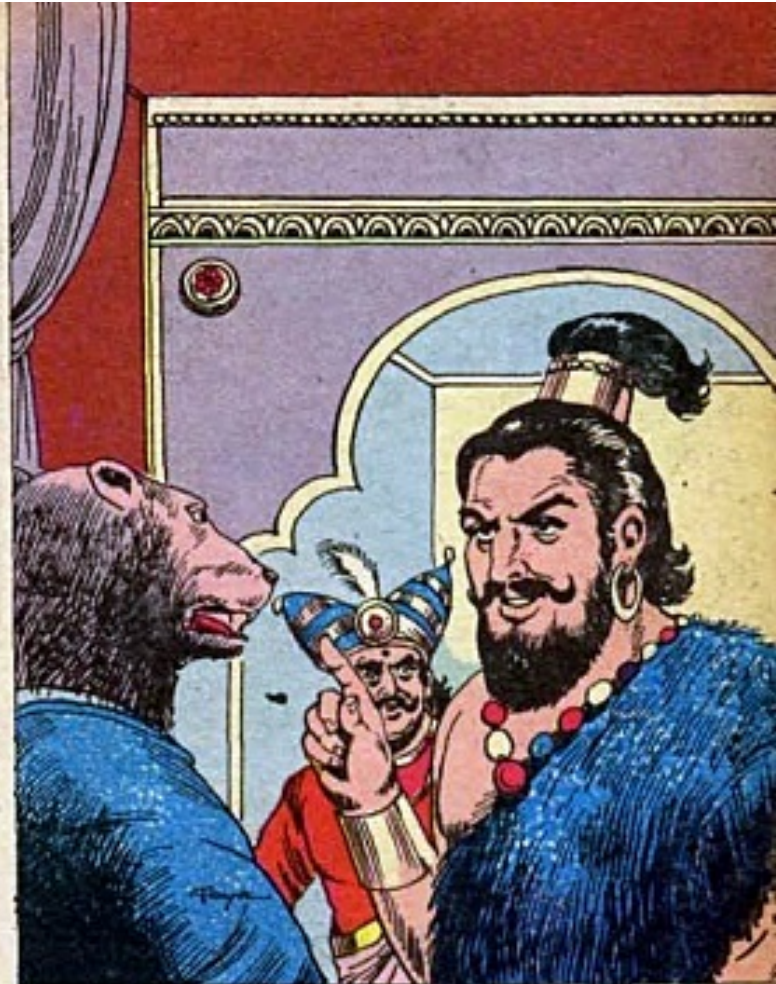
समझो कि मैं तुम्हारे और राजा दुर्मुख की बात भूल गया हूँ। तुम दोनों का हित करने के बाद ही मैं इस प्रदेश से चला जाऊँगा। चन्द्रशिला नगर के राजा जितकेतु ने कालीवर्मा के साथ मेरा भी अपमान किया है। हम भी इसका बदला लेना चाहते हैं। पहले हमें उस नगर में जाकर उस राजा का अंत देखना होगा।"

"उस दुष्ट राजा का मंत्री जीवगुप्त थोड़े सैनिकों के साथ क़िले के बाहर पहरा बिठाये हुए है, वह अचानक हम पर हमला न कर बैठे, इस ख्याल से राक्षस उग्रदण्ड उन्हें रोके हुए खड़ा है। लेकिन हमें इस

"अच्छी बात है, तुम ऐसा ही करो। हम एक बार उस सामंत सूर्यभूपति और माया मर्कट की क़िले के भीतर खोज करेंगे, तब पीछे से चले आयेंगे।" कालीवर्मा ने कहा।

"अरे जंगली सेवक! हाथी को मण्डप की ओर थोड़ा और नज़दीक ले आओ।" बधिक भल्लूक ने पुकारा।

जंगली युवक हाथी को मण्डप के समीप ले आया, तब बधिक भल्लूक उस पर सवार हो गया। तब तक मौन रहकर इन सारी बातों को ध्यान से सुननेवाले राजा दुर्मुख ने भल्लूक मांत्रिक से कहा—

बात का बिलकुल पता नहीं चलता कि सामंत सूर्यभूपति और माया मर्कट इस क़िले के किस कोने में छिपे बैठे हैं?" कालीवर्मा ने कहा।

कालीवर्मा के मुँह से ये शब्द निकलते ही बधिक भल्लूक अपना परसु कंधे पर रखकर बोला—"कालीवर्मा साहब! मैं हाथी पर सवार होकर अभी क़िले के बाहर जाऊँगा और वहाँ के हाल का पता लगाऊँगा। राक्षस उग्रदण्ड की मदद के लिए मेरे पहुँचते देख वह मंत्री और उसके सैनिक चन्द्रशिला नगर की ओर भाग खड़े हो जायें तो इसमें आश्चर्य की कोई बात न होगी।"

"मांत्रिक प्रभू! इन मुट्ठी भर सैनिकों के साथ मेरा इस क़िले में रहना हितकर नहीं है, मैं भी आप के साथ चन्द्रशिला नगर चला आऊँगा।"

"मैं भी यही कहने जा रहा था। याद रखो, तुम अपने चालीस सैनिकों के साथ एक नये राज्य को ही जीतने जा रहे हो। तुम खुश हो न?" भल्लूक मांत्रिक ने कहा।

इसके बाद सभी लोग सभा मण्डप से नीचे उतर आये। कालीवर्मा तथा भल्लूक मांत्रिक सामंत और माया मर्कट को खोजने के लिए सैनिकों को आज्ञा दे ही रहे थे कि तभी क़िले की दीवारों पर

चढ़े राजा दुर्मुख के दो अंग रक्षक एक स्वर में चिल्ला उठे–"महाराज, सामंत और माया मर्कट राजा जितकेतु के मंत्री के बाजू में हैं, वे दोनों राक्षस उग्रदण्ड से कोई बातचीत कर रहे हैं।"

"गुरुजी! पहले ही मेरे मन में यह संदेह पैदा हुआ था कि ऐसा हो सकता है। जले हुए दुर्ग के द्वारों के पास हमें पहले ही उचित पहरा बिठा देना चाहिए था। संभवतः राक्षस उग्रदण्ड को वे दुष्ट अपने पक्ष में मिला लेने की कोशिश करते होंगे।" कालीवर्मा ने अपनी शंका प्रकट की।

"कालीवर्मा, ऐसे प्रयत्न कभी सफल न होंगे। वह राक्षस मुझ से कोई सहायता चाहता है। चलो, अब हम रवाना हो जाये।" भल्लूक मांत्रिक बोला।

कालीवर्मा की शंका के अनुसार राजा जितकेतु का मंत्री जीवगुप्त राक्षस उग्रदण्ड को भारी प्रलोभन देकर अपने पक्ष में कर लेने का प्रयत्न कर रहा था। उसका समर्थन माया मर्कट के रूप में स्थित भ्रांतिमति कर रहा था।

राक्षस उग्रदण्ड पत्थरवाले गदे को ऊपर उठाये कह रहा था–"मुझे तुम लोगों से किसी तरह की मदद की जरूरत नहीं है। भल्लूकपादवाले पर्वतों में मेरे एक रिश्तेदार हैं। उन्हें पहले मुझे बंधन मुक्त करना है।"

इस पर माया मर्कट परिहासपूर्वक किचकिच करते बोला–"उग्रदण्ड! वह रिश्तेदार कौन है? तुम्हारे भाई ही तो हैं? उन्हें बंधन मुक्त करना क्या? मेरे गुरु तांत्रिक मिथ्या मिश्र ने उन्हें कभी का मिट्टी में मिला दिया है। इसलिए तुम अपने भाई की बात भूल जाओ और चुपचाप यहीं पर राजा जितकेतु के आश्रय में सुखपूर्वक अपना समय बिता दो। इसी में तुम्हारा हित है।"

"क्या मेरे भाई को उस तांत्रिक ने सचमुच मार डाला है? या तुम झूठ

बोलते हो?" यों उग्रदण्ड ने दांत भींचकर पूछा।

माया मर्कट कुछ कहने को हुआ, तब मंत्री जीवगुप्त उसे रोकते हुए बोला– "उग्रदण्ड, अब तक जो कुछ हुआ है, उसे भूल जाओ। हमें सचमुच इस बात का गर्व होगा कि हमारे राज्य में एक महान शक्तिशाली राक्षस निवास करता है। इसी प्रकार तुम भी अपना शेष जीवन हमारे राजा के आश्रय में आराम से बिता सकते हो।"

"तो इसका मतलब है कि मुझ से किसी प्रकार की सहायता की अपेक्षा किये बिना तुम्हारा राजा मुझे आतिथ्य देंगे? और हर प्रकार से मेरी सुखसुविधा का ख्याल रखेंगे?" उग्रदण्ड ने पूछा।

"तुमसे हमें सिर्फ़ एक ही सहायता की जरूरत है। सुनो, हम लोग इस वक़्त क़िले में प्रवेश करने जा रहे हैं। वहाँ पर भल्लूक मांत्रिक, कालीवर्मा नामक अपराधी और राजा दुर्मुख का अंत करने में तुम हमारी थोड़ी मदद करो, बस, हम तुमसे यही चाहते हैं।" मंत्री जीवगुप्त ने कहा।

राक्षस उग्रदण्ड इसका उत्तर देने जा रहा था, तभी क़िले में से भैंसे पर सवार भल्लूक मांत्रिक के साथ सब लोग एक साथ बाहर आ गये। उन्हें देख भय कंपित हो मंत्री सोचने लगा कि अब क्या किया जाय, फिर बगल में घोड़ों पर सवार सामंत सूर्यभूपति और माया मर्कट की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि दौड़ाई।

राक्षस उग्रदण्ड एक बार हुंकार करके बोला–"मंत्री, तुम्हारे और तुम्हारे साथ रहनेवाले दुष्टों की मैं यही मदद करने जा रहा हूँ।" यों कहकर राक्षस उग्रदण्ड ने पत्थरवाले गदे को उठाकर माया मर्कट की ओर फेंक दिया।

माया मर्कट बिजली की गति के साथ किचकिच करते घोड़े पर से ऊपर उड़ा। उग्रदण्ड का पत्थरवाला गदा उसके घोड़े के सर पर जा लगा। (अभी है)
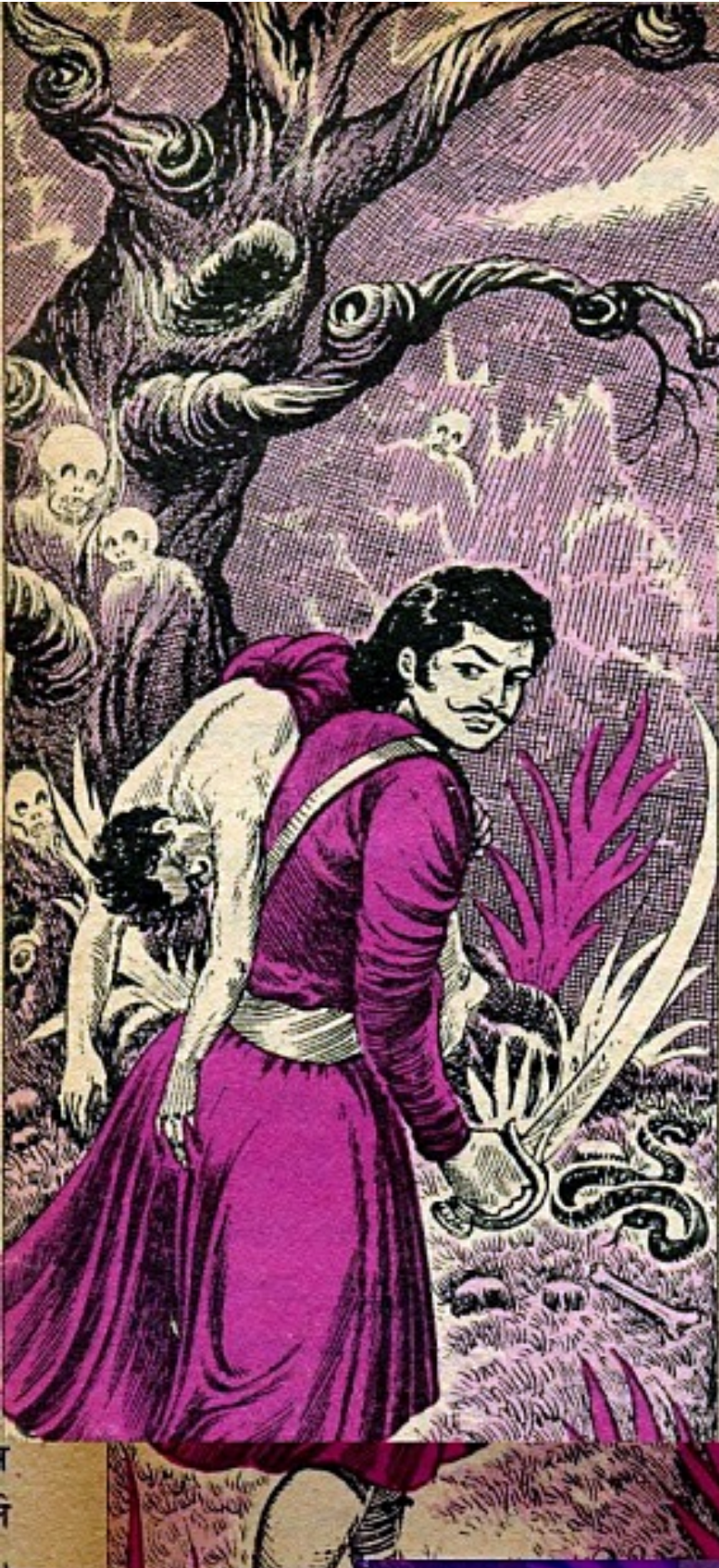
मित्र-द्रोह

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, मैं नहीं जानता कि शायद आप अपने उत्तम स्वभाव का विस्मरण करके व्यवहार करते हैं, लेकिन कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो अयाचित रूप में प्राप्त अपनी क़िस्मत को खो बैठते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप में आप को वीरवर्मा की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: मालव देश के युवराजा कल्याणवर्मा का अत्यंत निकट मित्र वीरवर्मा था। वीरवर्मा मालव राज्य के दरबार के एक कर्मचारी का पुत्र था। फिर भी कल्याणवर्मा उसे अपने

बेताल कथाएँ

लोग कहा करते थे कि उन दोनों मित्रों के बीच पूर्व जन्म का कोई निकट साहचर्य है।

एक बार वीरवर्मा अकेले ही जंगल में शिकार खेलने गया। वहाँ पर उसे अचानक एक नारी का आर्तनाद सुनाई दिया। वीरवर्मा ने उस दिशा में अपने घोड़े को बढ़ाया और एक असहाय युवती को देखा। वह भी एक घोड़े पर सवार थी। वह घोड़ा भड़का हुआ था, अपनी पिछली टांगों पर खड़े हो उस युवती को नीचे गिराने का सब प्रकार से प्रयत्न कर रहा था।

वीरवर्मा ने तत्काल अपने घोड़े को उस भड़कीले घोड़े की ओर बढ़ाया, उसकी लगाम कसकर उसे अपनी अगली टांगों पर खड़े होने लायक़ बनाया, तब घोड़े की पीठ सहलाकर उसे निर्भय बनाया।

घोड़े पर सवार वह युवती घोड़े से भी कहीं ज़्यादा भयभीत प्रतीत हो रही थी। उसने अपनी कृतज्ञता के साथ अपना परिचय भी दिया। वह उदयपुर की राजकुमारी है, उसका नाम स्वर्णकेशि है। वह अपने परिवार के साथ वन विहार के लिए आई हुई थी, उस समय एक बाघ का गर्जन सुनकर उसका घोड़ा भड़क उठा। उसने लगाम कसकर उसे रोकना चाहा, पर घोड़े ने उसी को नीचे गिराने का प्रयत्न किया। ऐसी हालत में उस खतरे से उस युवक ने उसे बचाया है, इन शब्दों के साथ उस युवती ने ऐसी दृष्टि उस युवक की ओर प्रसारित की, जिससे स्पष्ट विदित हो रहा था कि वह उस युवक के साथ हृदयपूर्वक प्यार करती है।

स्वर्णकेशि ने वीरवर्मा को बताया कि स्वर्णकेशि का विवाह करने के प्रयत्न उसके पिता कर रहे हैं, पर कल तक उसके मन को आकृष्ट करनेवाला कोई पुरुष नहीं रहा, अगर उसके पिता स्वयंवर की घोषणा करे तो वह अवश्य ही आ जावें। इसके बाद स्वर्णकेशि ने पूछा—"आप ने तो अपना परिचय नहीं दिया?"

"मैं मालव देश का युवराजा कल्याणवर्मा हूँ।" वीरवर्मा झूठ बोला।

"अच्छी बात है, मेरे स्वयंवर में आना न भूले।" स्वर्णकेशि ने कहा। इसी समय राजकुमारी का परिवार उसकी खोज करते वहाँ पर आ पहुँचा। राजकुमारी इस तरह अपने परिवार के साथ चली गई, मानो वीरवर्मा को छोड़कर जाने में उसे बड़ा दुख होता हो।

इसके बाद वीरवर्मा ने कल्याणवर्मा से मिलकर सारा वृत्तांत सुनाया, यह भी बताया कि उसने स्वर्णकेशि को अपना नाम कल्याणवर्मा बता दिया है।

कल्याणवर्मा थोड़ी देर मौन रहा, फिर उसने अपने मित्र की कामना की पूर्ति करने का निश्चय किया। बात यह थी कि कल्याणवर्मा भी स्वर्णकेशि के साथ विवाह करना चाहता था, पर उसने यह बात किसी पर प्रकट नहीं की। अब जब उसे मालूम हुआ कि स्वर्णकेशि उसके मित्र के साथ प्यार करती है, तब उसने उन दोनों के बीच पड़ना उचित न समझा।

"दोस्त! स्वर्णकेशि के साथ तुम्हारे विवाह के लिए जो कुछ मुझ से संभव होगा, मैं अवश्य करूँगा।" वीरवर्मा ने कहा।

स्वर्णकेशि ने राजमहल को लौटते ही अपना सारा अनुभव अपने पिता को सुनाया और उसकी रक्षा करनेवाले मालव राजकुमार कल्याणवर्मा के साथ विवाह करने का निश्चय भी बताया। इस पर राजा ने अपनी सम्मति दी। क्यों कि बहुत दिनों से स्वर्णकेशि के माता-पिता कल्याणवर्मा के साथ ही उसका विवाह करने का विचार रखते थे। पर स्वर्णकेशि का विचार जाने बिना उससे वे लोग यह बात कहना नहीं चाहते थे। अब वह स्वयं इस रिश्ते के लिए तैयार हो गई है, इसलिए उन्हें ऐसा लगा कि उनका एक बड़ा भारी बोझ उतर गया है।

इसके बाद राजा ने कल्याणवर्मा का चित्र स्वर्णकेशि के हाथ देते हुए कहा–
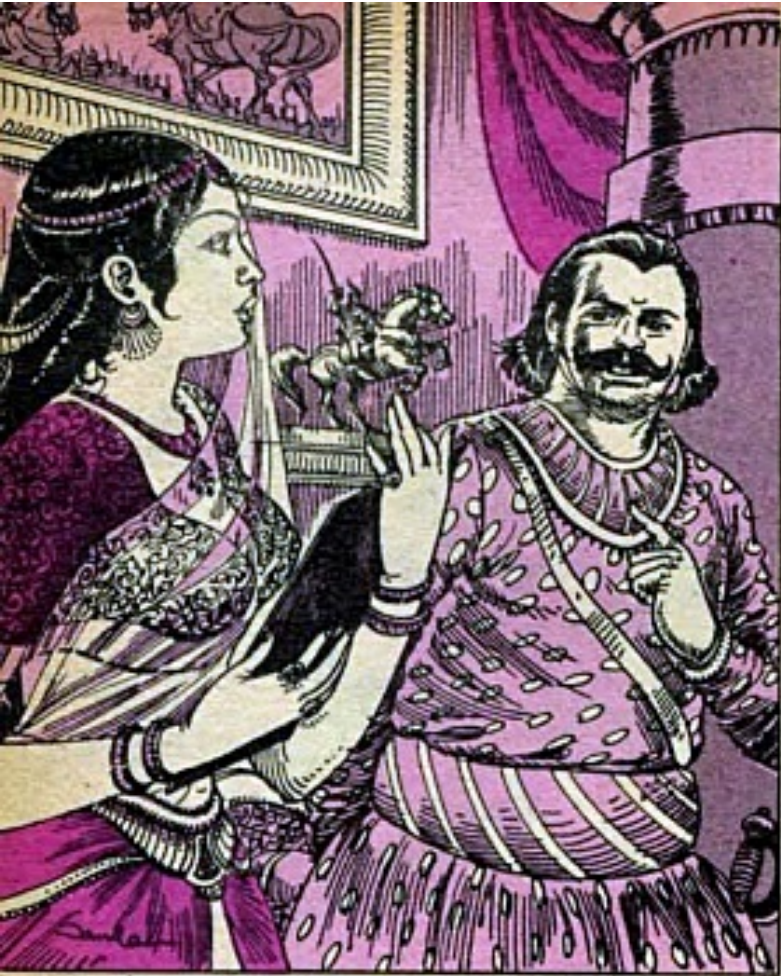
"पिताजी! उस व्यक्ति के तथा उसके चित्र में थोड़ा अंतर दिखाई देता है।" स्वर्णकेशि ने अपनी शंका व्यक्त की।

"हो सकता है, मैं भी उस युवक को एक बार देखना चाहता हूँ। मैं उसे यहाँ आने के लिए निमंत्रण भेज दूँगा।" स्वर्णकेशि के पिता ने कहा।

अपने पिता के मुँह से ये शब्द सुनने पर स्वर्णकेशि को भी लगा कि उसके संदेह का निवारण करने के लिए यह एक अच्छा मौक़ा है।

इसके बाद कल्याणवर्मा के पास उदयपुर के राजा का निमंत्रण भेजा गया। कल्याणवर्मा ने वीरवर्मा को बुलाकर समझाया–"तुम्हें मेरे बदले उदयपुर जाना होगा। तुम स्वर्णकेशि के पिता के पास कल्याणवर्मा जैसे भले ही अभिनय करो, पर स्वर्णकेशि से सच बता दो। क्योंकि उसने तुम्हारे द्वारा मेरा नाम सुनने के पहले ही तुमसे प्यार किया है, इसलिए तुम्हारा प्रेम सफल होगा। विवाह के बाद सच्ची बात सब पर प्रकट हो जाय तो कोई बात नहीं है।"

इस पर वीरवर्मा युवराजा की पोशाक पहनकर सपरिवार उदयपुर पहुँचा और राजा से मिला। कल्याणवर्मा के चित्र तथा असली व्यक्ति में अंतर जरूर था, इसीलिए स्वर्णकेशि उस चित्र को पहचान

"बेटी, हम कई दिनों से जो विचार रखते थे, वह तुम्हारे लिए भी पसंद आ गया। मेरे यहाँ कल्याणवर्मा का चित्र कई दिनों से पड़ा हुआ है। इसे तुम आइंदा अपने महल में ही रख सकती हो।"

उस चित्र को देख स्वर्णकेशि चकित रह गई। क्यों कि जंगल में उसकी रक्षा करनेवाले व्यक्ति का चित्र न था वह।

राजकुमारी ने अपने पिता से पूछा– "क्या मालव राजा के दो पुत्र तो नहीं हैं?"

"नहीं बेटी! मालव राजा के तो एक ही पुत्र है। उसका नाम कल्याणवर्मा है। वही युवराजा भी है।" पिता ने समझाया।

न पाई। उदयपुर के राजा ने सोचा कि यह भूल तो चित्रकार की हो सकती है।

इसके बाद वीरवर्मा स्वर्णकेशि के महल में पहुँचा। स्वर्णकेशि ने वीरवर्मा से कहा—"मेरे पिताजी ने आप को एक बार देखने के ख्याल से बुला भेजा है। सुना है कि मेरे और आप के भी पिता ने बहुत समय पूर्व ही हम दोनों का विवाह करने का निश्चय कर लिया है। मगर मैं यह बात बिलकुल जानती न थी।"

"मैं आशा करता हूँ कि हमारा विवाह शीघ्र हो जाएगा।" वीरवर्मा ने कहा।

स्वर्णकेशि कल्याणवर्मा का चित्र लाकर वीरवर्मा को दिखाते हुए बोली—"क्या आप जानते हैं कि यह चित्र किनका है?"

वीरवर्मा चकित रह गया। उसने भर्राये हुए स्वर में पूछा—"यह चित्र तुम्हारे पास कैसे आ गया?"

"मेरे साथ विवाह करने की इच्छा रखनेवाले किसी राजकुमार ने यह चित्र मेरे पिता के पास भेज दिया है।" स्वर्णकेशि ने उत्तर दिया।

इस पर वीरवर्मा आवेश में आकर बोला—"यह कैसा दगा है? कल्याणवर्मा मेरी सहायता करने का वचन देकर यों पीठ पीछे छुरी भोंकता है?"

"दगा तो कल्याणवर्मा का नहीं है, तुम्हारा है! मेरे पिताजी पर सच्ची बात प्रकट होने के पहले ही तुम यहाँ से जल्दी चले जाओ।" स्वर्णकेशि ने समझाया।

वीरवर्मा चला गया। इसके थोड़े दिन बाद स्वर्णकेशि और कल्याणवर्मा का विवाह वैभवपूर्वक संपन्न हुआ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, स्वर्णकेशि ने पहले वीरवर्मा के साथ विवाह करना चाहा, फिर क्यों त्याग दिया? क्या इसलिए कि वह राजकुमार नहीं है? अथवा कल्याणवर्मा का चित्र वीरवर्मा से ज्यादा सुंदर दिखाई दिया? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो आप का सिर टुकड़े-टुकडे हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"कल्याणवर्मा की कल्पना के अनुसार स्वर्णकेशि ने वीरवर्मा को राजकुमार मानकर उसके साथ प्यार नहीं किया था। यह बात जानने के पहले ही उसने वीरवर्मा के साथ प्यार किया। राजकुमारी के प्रेम के प्रति विश्वास रहने के कारण ही कल्याणवर्मा ने वीरवर्मा को अपने बदले भेजकर उससे सच्ची बात बता देने की चेतावनी दी है। पर जब स्वर्णकेशि ने कल्याणवर्मा के चित्र को देखा, उसी क्षण उसने भांप लिया कि उसने जिस युवक को जंगल में देखा है, वह राजकुमार नहीं है। यदि वह राजकुमार के साथ ही विवाह करना चाहती तो उसे वीरवर्मा के साथ बात करने की जरूरत ही न थी। उसने यह जानने के लिए कि वास्तव में वह युवक उसके प्रेम के योग्य है या नहीं, प्रयत्न किया और वीरवर्मा को अपना सच्चा परिचय देने का मौक़ा दिया। पर उसने यह नहीं बताया कि वह कल्याणवर्मा नहीं है। कम से कम कल्याणवर्मा की सलाह तक का पालन नहीं किया। उल्टे कल्याणवर्मा ने उसके वास्ते जो त्याग किया था, उसे भी समझने का प्रयत्न नहीं किया, तिस पर उस पर दगा देने का आरोप लगाया। इस घटना के बाद स्वर्णकेशि का वीरवर्मा के साथ विवाह करना असंभव था।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुन: पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

बुद्धि का चमत्कार

महेन्द्रपुर के राजा मार्ताण्डवर्मा के यहाँ कई मंत्री थे। उनमें मणिमंत को अधिक प्रखर बुद्धिवाला मानकर राजा ने उसे अपना प्रधान मंत्री नियुक्त करना चाहा।

लेकिन शुक्र नामक एक और मंत्री रानी के निकट रिश्तेदार था। इस कारण रानी ने राजा से कहा—"महाराज! शुक्र मंत्री मणिमंत से किस बात में कम है? वह बड़ा ही बुद्धिमान है। इसलिए आप शुक्र को ही प्रधान मंत्री के पद पर नियुक्त कीजिए!"

राजा ने जवाब दिया—"महारानी! अगर शुक्र मंत्री अपने को मणिमंत से भी ज्यादा बुद्धिमान साबित कर दे तो मैं उसी को प्रधान मंत्री का पद दूंगा।"

उसी वक़्त राजा के सामने एक समस्या उत्पन्न हुई। नगर के एक करोड़पति के एक विवाह योग्य कन्या थी। उसके साथ विवाह करने के विचार से तीन युवक आगे आये। तीनों युवक सब प्रकर से योग्य थे। तिस पर तीनों की शिक्षा-दीक्षा एक ही गुरु के यहाँ हुई थी। तीनों युवक समान सुंदर भी थे।

उन तीनों के बीच का अंतर निर्णय न कर पाने की स्थिति में करोड़पति ने अपने गुरु की सलाह माँगी। गुरु ने अपने मुंह से यह नहीं बताया कि अमुक युवक ज्यादा योग्य है, उन्होंने सांकेतिक रूप में तीनों शिष्यों के हाथ तीन चीजें देकर उनके आधार पर योग्य युवक को चुनने की सलाह करोड़पति को दी। वे चीजें थीं—क्रमशः मिट्टी, धान और पानी।

करोड़पति उन तीनों चीज़ों के आधार पर किस युवक के साथ अपनी पुत्री का विवाह करे, यह निर्णय वह खुद नहीं

पाया। उसने आखिर अपनी समस्या राज सभा के सामने रखी।

राजा ने तीनों युवकों को दरबार में बुला भेजा और उनसे पूछा—"तुम्हीं लोग बतला दो कि तुम लोगों ने अपने गुरु के हाथ से जो चीज़ें ली हैं, उनमें श्रेष्ठ वस्तु कौन सी है?"

मिट्टी पानेवाले युवक ने कहा—"महाराज, सब से श्रेष्ठ वस्तु क्षेत्र याने मिट्टी है न? उसके बिना बीज और पानी अनुपयोगी है, इसलिए मिट्टी ही श्रेष्ठ वस्तु है।"

बीज लेनेवाले युवक ने बताया—"प्रभू! प्राणी के लिए बीज प्रधान है। खाली मिट्टी से कोई चीज़ पैदा नहीं हो सकती। इस कारण गुरुजी ने मेरे हाथ जो बीज दिये, वे ही उत्तम हैं।"

अंत में पानी ग्रहण करनेवाले युवक ने बताया—"महाराज! पानी के बिना क्षेत्र याने मिट्टी और बीज व्यर्थ हैं। क्योंकि पानी के बिना वे उग नहीं सकते। इसलिए पानी ही सबसे श्रेष्ठ है।"

इस पर राजा ने मंत्री शुक्र से उसकी राय माँगी। शुक्र ने तीसरे युवक के कथन का समर्थन करते हुए कहा—"महाराज! पानी ही निस्संदेह सब से श्रेष्ठ है।"

तब राजा ने मणिमंत से पूछा—"मणिमंत, तुम्हारा क्या विचार है?"

"महाराज! गुरुजी ने इन युवकों के हाथ जो चीज़ें दीं, उनकी जांच किये बिना में अपना निर्णय नहीं दे सकता।" इन शब्दों के साथ मणिमंत ने पानी का स्वाद देखा, वह नमकीला था जो किसी काम का न था, बीज भुनाये गये थे, वे बोने के लायक़ न थे, पर मिट्टी श्रेष्ठ थी। तब मणिमंत ने कहा—"गुरुजी ने अपने शिष्यों के हाथ जो चीज़ें दी हैं, उनमें मिट्टी श्रेष्ठ है। मेरा विचार है, उसे लेनेवाला युवक ही श्रेष्ठ है, यही गुरुजी का विचार है।"

फिर क्या था, करोड़पति की समस्या हल हो गई। इसके बाद रानी ने शुक्र मंत्री का राजा के सामने कभी समर्थन नहीं किया।

यह तो अभिनय है!

एक गाँव में रामशरण और शिवशरण नामक दो अभिनेता थे। रामशरण का ईश्वर पर विश्वास न था। शिवशरण वैसे सदाचार व ईमानदारी के समर्थक न था, पर ईश्वर पर उसका गहरा विश्वास था। इस कारण वह रामशरण से द्वेष करता था।

एक बार उस गाँव में कोई त्योहार आया; उस अवसर पर एक नाटक खेला गया। उस नाटक में रामशरण ने एक अनन्य भक्त का वेष तथा शिवशरण ने बड़े ही ईमानदार व सदाचारी नागरिक का वेष धारण किया। वैसे दोनों कुशल अभिनेता थे।

दूसरे दिन चौपाल के पास उस नाटक की चर्चा करते हुए रामशरण ने कहा– "वास्तव में ईश्वर कहाँ है? यह सब झूठ है।"

इस पर शिवशरण ने झल्लाकर कहा–"ईश्वर पर तुम्हारा अगर विश्वास नहीं है तो तुमने भक्त का वेष क्यों धारण किया?" ये शब्द सुनकर सब लोग रामशरण की ओर देख हँस पड़े।

पर रामशरण जरा भी विचलित हुए बिना बोला–"शिवशरण, यह कौन बड़ी बात है? यह तो अभिनय था। तुमने भी तो सदाचारी का वेष धारण किया था?"

इस बार सब लोग शिवशरण को देख खिलखिलाकर हँस पड़े।

कठिन कार्य

चिरंजीवी नामक महान ज्ञानी देशाटन करते राजा चन्द्रसेन के दरबार में पहुँचे। उस वक़्त राजदरबार में यह चर्चा चल रही थी कि "इस दुनिया में सब से बड़ा कठिन कार्य क्या है?"

एक एक करके दरबारी उठकर जवाब दे रहे थे। कुछ लोग कह रहे थे कि स्वर्ग में जाना कठिन है, कुछ अमृत लाना कठिन बता रहे थे, कुछ और लोग ईश्वर के दर्शन करना सब से कठिन बता रहे थे।

राजा ये सब उत्तर सुनकर खीझ उठे और बोले—"स्वर्ग, अमृत और ईश्वर— इनके बारे में हम लोग कुछ नहीं जानते। न हमने उन्हें देखा है, कुछ लोग कहते हैं, कि ये सब मौजूद हैं, कुछ लोग उन्हें कल्पना मात्र बताते हैं। अगर कोई यह बता दे कि उन लोगों ने स्वयं उन्हें देखा है, तो हम यह साबित नहीं कर पायेंगे कि उनकी बातें झूठ हैं या सच! इसलिए आप लोग ऐसे कठिन काम बताइये जिन्हें हम लोग जानते हुए भी कर नहीं पायेंगे।"

इस पर लोगों ने कहा कि सच बताना कठिन है, किसी ने एक पत्नीव्रत को कठिन कहा तो किसी ने महान दाता बनना कठिन बताया।

राजा ये जवाब सुनकर भी संतुष्ट न हुए, तब चिरंजीवी ने उठकर अपना परिचय दिया और कहा—"महाराज! मुझे लगता है कि सब से कठिन कार्य तो इच्छाओं को दमन करना है।" राजा ने अस्वीकार सूचक सर हिलाकर पूछा— "सो कैसे?"

"हरिश्चन्द्र सत्यवादी थे, रामचन्द्रजी ने एकपत्नीव्रत का पालन किया। शिबि, दधीची और कर्ण महान दाता हैं, मगर ये गुण उनकी इच्छाओं के अनुरूप थे,

इसलिए उन पर वे विजय पा सके। इस संसार का मूल कारण इच्छा है! चाहे महात्मा हों या पापी, सब लोग इच्छाओं के गुलाम हैं।" चिरंजीवी ने समझाया।

राजा ने चिरंजीवी के तर्क पर प्रसन्न हो, पुरस्कार देकर उनका सत्कार किया।

उस दरबार में दुर्जय नामक एक व्यक्ति था। उसने यों कहा—"प्रभू! इच्छाओं पर विजय पाना कोई कठिन कार्य नहीं है। इच्छाओं पर दमन करनेवाला एक व्यक्ति समीप के जंगल में है। यदि आप की आज्ञा हो तो मैं उसे लाकर यह बात साबित कर सकता हूँ।"

"साबित कर सकोगे तो बढ़िया पुरस्कार मिलेगा, वरना कारागार की सजा भोगनी होगी! यह तुम्हें स्वीकार्य है?" राजा चन्द्रसेन ने कहा।

इसके बाद दुर्जय ने अपने किसी परिचित व्यक्ति को ऋषि का वेष धरवाकर उसे समझाया कि राजदरबार में उसे कैसा व्यवहार करना है, तब उसे लेकर दरबार में पहुँचा। राजा को उस झूठे ऋषि को दिखाकर दुर्जय ने कहा— "महाराज! यही वह व्यक्ति है!"

इस पर राजा ने चिरंजीवी को आदेश दिया कि वह इस बात की परीक्षा ले कि वह व्यक्ति इच्छाएँ रखता है या नहीं। चिरंजीवी ने उस व्यक्ति को कई प्रकार के प्रलोभन दिखाये। पर वह झूठा ऋषि विचलित नहीं हुआ। ऐसा लगा कि वह व्यक्ति कोई इच्छा नहीं रखता है!

आखिर ऊब कर राजा ने उससे पूछा— "मैं तुम्हें इस राज्य का राजा बनाऊँगा, क्या तुम स्वीकार करोगे?"

झूठे ऋषि ने झट से जवाब दिया— "महाराज! मैं समस्त को त्याग चुका हूँ, मेरे लिए राज्य की ज़रूरत ही क्या है?"

चिरंजीवी बोले—"महानुभाव! आप जैसे लोग ढूँढ़े भी नहीं मिलते! फिर भी कल आप दरबार में पधारेंगे तो मैं यह साबित कर सकता हूँ कि आप इच्छाओं से मुक्त

नहीं हैं। यदि आप न आवे तो यह समझा जाएगा कि आप इच्छाएँ रखते हैं।"

चिरंज़ीवी का यह उद्देश्य किसी की समझ में न आया। सब ने यही सोचा कि चिरंजीवी का विचार होगा कि जो व्यक्ति प्रकट रूप से सब के सामने इच्छाओं से मुक्त दिखाई देते हैं, वह गुप्त रूप से अपनी इच्छाएँ प्रकट करेंगे। झूठा ऋषि भी यही विचारकर बड़ी सावधानी बरतने लगा। उससे जो भी मिलने जाता, उस पर शंका करते हुए कि यह व्यक्ति चिरंजीवी के द्वारा भेजा गया होगा, वह सारा दिन अत्यंत सतर्क रहा। दूसरे दिन दुर्जय झूठे ऋषि को साथ ले दरबार में पहुँचा। चिरंजीवी ने ऋषि को देखते ही पूछा—"मैंने कहा था कि यह साबित करूँगा कि आप इच्छाएँ रखते हैं, तब आप क्यों आये?"

झूठे ऋषि बोले—"यही देखने के लिए कि आप कैसे साबित कर सकते हैं?"

"यही आप की इच्छा है।" चिरंजीवी ने कहा। इस पर सारा दरबार हर्षनादों से गूँज उठा। तब चिरंजीवी झूठे ऋषि से बोले—"स्वामी! आप यह साबित करने के लिए जंगल से राजदरबार में आये हैं कि आप इच्छाएँ बिलकुल नहीं रखते। एक और दिन रुक जाने का अनुरोध करने पर आप रुक गये। आप इच्छाएँ नहीं रखते, तो यह साबित करने की कामना आप की इच्छा नहीं है!"

इस पर राजा चन्द्रसेन ने दुर्जय की ओर देख कहा—"तुम हार गये! इसलिए तुम्हें कारागार की सजा भोगनी होगी!"

चिरंजीवी ने कहा—"महाराज! इसमें दुर्जय का कोई अपराध नहीं है। अभी अभी तो यह साबित हुआ कि इच्छाओं पर विजय पाना असंभव है। मैंने जो बात कही, उसे झूठा साबित करने की इच्छा से ही उन्होंने ऐसा किया है। इसलिए आप इन्हें मुक्त कर दीजिएगा।"

इस पर राजा चन्द्रसेन ने दुर्जय को क्षमा कर दिया और चिरंजीवी का बढ़िया सत्कार किया।

दुर्वास

दुर्वास का अर्थ बिना निवासवाला होता है। ये महामुनि बिना निवासवाले जैसे ही दीखते हैं।

दुर्वास शिवजी के अंश से अत्रि महामुनि और अनसूया दंपति के घर पैदा हुए। उस दंपति के यहाँ त्रिमूर्तियों के अंश से जो पुत्र पैदा हुए, उनमें से ब्रह्मा के द्वारा चन्द्र और विष्णु के द्वारा दत्तात्रेय पैदा हुए।

शिवजी एक बार त्रिपुरासुरों का वध करके अपना बाण लेकर वापस लौट रहे थे, तब उस बाण को एक शिशु के रूप में देख देवताओं ने शिवजी से पूछा– "यह लड़का कौन है?" इस पर शिवजी ने उत्तर दिया था–"यह लड़का दुर्वास है।"

एक बार दुर्वास गंधमादन पर्वत पर तपस्या कर रहे थे, उस वक़्त साहसिक नामक एक गंधर्व तिलोत्तमा नामक अप्सरा के साथ प्रणय कलाप कर रहे थे, इसे देखने पर दुर्वास के मन में भी यह इच्छा पैदा हुई कि उन्हें भी विवाह करके गृहस्थ जीवन बिताना चाहिए। उसी समय और्वु नामक व्यक्ति से दुर्वास की मुलाक़ात हो गई। दुर्वास ने उनके सामने अपनी इच्छा प्रकट की। और्वु अपनी पुत्री कंदली के साथ दुर्वास का विवाह करने को तैयार हो गये।

दुर्वास ने थोड़े समय तक कंदली के साथ गृहस्थ जीवन बिताया, लेकिन दुर्वास जैसे कंदली भी अत्यंत क्रोध स्वभाव की थी। इसलिए उन दोनों के बीच परस्पर वैमनस्य बढ़ता गया। इस कारण दुर्वास गार्हस्थ्य जीवन से विमुख हो फिर से तपस्या में लीन हो गये।

दुर्वास पांडवों के जन्म का भी प्रधान कारक थे। एक बार जब कुंती अविवाहिता

थी, तब दुर्वास कुंती के पालित पिता कुंतीभोज के घर गये, कुंती ने बड़ी श्रद्धा के साथ उनकी सेवा की। कुंती की परिचर्या से प्रसन्न होकर उसे एक मंत्र का उपदेश किया। उस मंत्र की मदद से कुंती ने सूर्य का आवाहन कर कर्ण का जन्म दिया। विवाह के बाद अपने पति पांडुराजा की अनुमति से कुंती ने क्रमशः यमराज, वायुदेव और इंद्र के द्वारा युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन का जन्म दिया। उसी मंत्र की मदद से माद्रि ने नकुल और सहदेव का जन्म दिया। इस प्रकार दुर्वास महाभारत की कथा के मूल कारक बने।

लेकिन दुर्वास ने उस आदरभाव को बनाये नहीं रखा। पांडव जिस वक़्त वनवास कर रहे थे, उस वक़्त उनका अपमान करने के ख़्याल से वे अपने साथ एक सौ ब्राह्मणों को लेकर पांडवों के पास पहुँचे। युधिष्ठिर ने उन सब को प्रेम पूर्वक भोजन के लिए निमंत्रित किया। पर तब तक पांडव सब भोजन कर चुके थे और द्रौपदी ने अक्षय पात्र को धो डाला था।

द्रौपदी यह सोचकर परेशान थी कि इतने सारे अतिथियों को भोजन कैसे करावे, तभी श्रीकृष्ण आ पहुँचे। उन्होंने देखा कि अक्षय पात्र में भोजन का एक दाना बचा हुआ है, उसे उन्होंने खा लिया। उसी वक़्त नहाने के लिए गये हुए दुर्वास और एक सौ ब्राह्मणों के पेट उफर आये। वे लोग खाने के नाम से घबराकर नदी से उसी ओर चले गये।

इंद्र के द्वारा दुर्वास का एक बार और अपमान हो चुका था। दुर्वास जब देशाटन कर रहे थे, तब एक विद्याधरी ने उन्हें एक पुष्पमाला सौंप दी। दुर्वास ने उस माला को लेकर इन्द्र लोक में जाकर इन्द्र को दे दिया। इन्द्र ने उस माला को अपने हाथी ऐरावत को दे दिया, ऐरावत ने उस माला को दूर फेंक दिया। इस पर दुर्वास का अपार अपमान हुआ था।

श्यमंतक मणि

सत्राजित नामक राजा ने सूर्य को प्रसन्न करके उनके द्वारा श्यमंतक नामक एक मणि को पुरस्कार के रूप में प्राप्त कर लिया। कहा जाता है कि वह रत्न रोज एक सौ साठ मन वज़न का सोना दिया करता था।

एक बार कृष्ण ने सत्राजित से श्यमंतकमणि के बारे में चर्चा की और उस रत्न की मांग की। मगर सत्राजित ने वह रत्न श्रीकृष्ण को देने से साफ़ इनकार कर दिया।
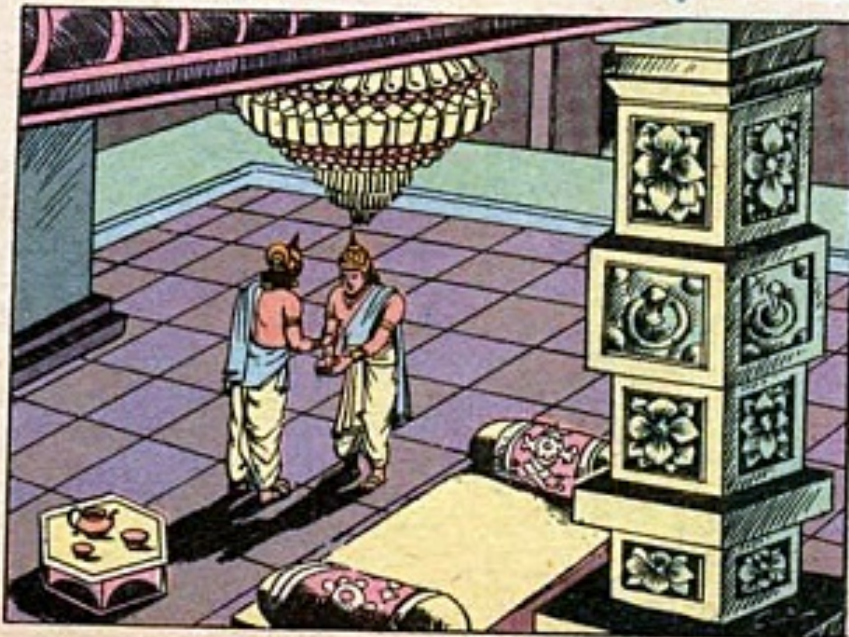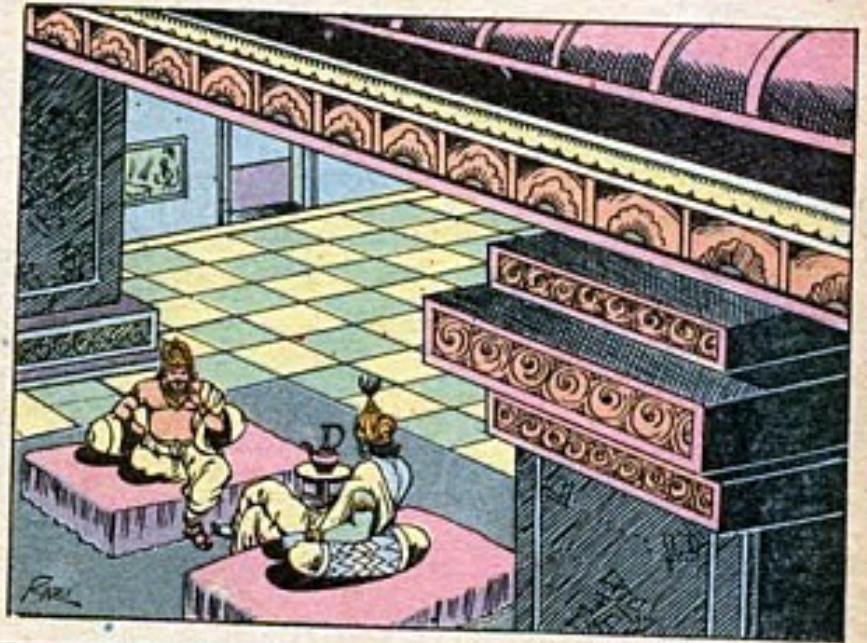
थोड़े दिन बीत गये। एक बार सत्राजित का छोटा भाई प्रसेन उस श्यमंतकमणि को धारण करके शिकार खेलने को एक घने जंगल में गया।

जंगल में प्रसेन शिकार खेल रहा था। उस वक़्त एक सिंह ने उस पर अचानक हमला किया, प्रसेन को मार डाला और उस रत्न को लेकर भाग गया।

उस वक़्त जांबवान ने उस सिंह का सामना किया और उसे मार डाला। तब उस रत्न को ले जाकर जांबवान ने अपनी पुत्री जांबवती के हाथ सौंप दिया।

इस पर सर्वत्र यह अफ़वाह फैल गई कि कृष्ण ने ही वह रत्न हड़प लिया है। इसे झूठा साबित करने के लिए श्रीकृष्ण प्रसेन की खोज में जंगल को छानते जांबवान की गुफ़ा में पहुँचे और उसके साथ युद्ध करके हराया।

इसके बाद जांबवान ने कृष्ण के हाथ श्यमंतकमणि के साथ अपनी पुत्री जांबवती को भी पत्नी के रूप में सौंप दिया । कृष्ण की आठ पत्नियों में से जांबवती भी एक है ।

श्रीकृष्ण ने श्यमंतकमणि को ले जाकर सत्राजित को दिया । इस पर सत्राजित ने प्रसन्न होकर कृष्ण के साथ अपनी पुत्री सत्यभामा का विवाह किया ।

न्याय के अनुसार शतधन्वु को सत्यभामा के साथ विवाह करना था । यह अन्याय होते देख कृतवर्मा तथा अक्रूर नामक यादवों ने शतधन्वु को उकसाकर सत्राजित का वध करने की प्रेरणा दी ।
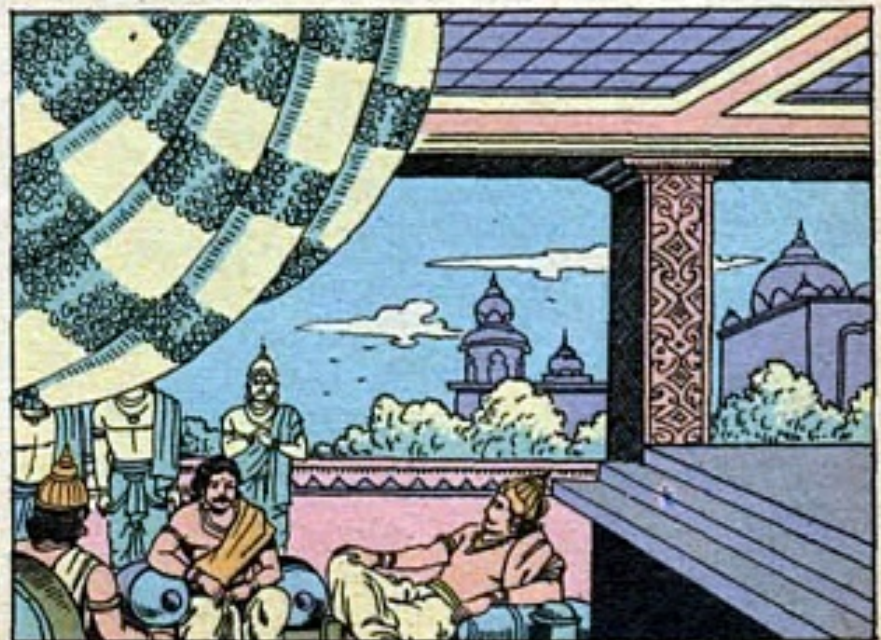
उनकी प्रेरणा से शतधन्वु क्रोध से भर उठा और उसने क्रोध के मारे इसका बदला लेना चाहा और एक दिन जब सत्राजित सो रहे थे, तब वहाँ पहुँचकर धोखे से उनकी हत्या कर डाली ।

सत्यभामा अपने पिता की मृत्यु पर बहुत दुखी हो उठी, तब शतधन्वु से प्रतीकार लेने के लिए सत्यभामा ने कृष्ण को उसके साथ युद्ध करने भेजा । उस युद्ध में शतधन्वु मर गया ।

पर श्यमंतक मणि शतधन्वु के हाथ न था, वह उसके पुत्र भोज के यहाँ पहुँच गया था, अक्रूर ने उसे लाकर कृष्ण को सौंप दिया । इस पर श्यमंतक मणि के कारण जो हत्याएँ हुईं, उनके परिहार के रूप में अक्रूर ने यज्ञ किये ।
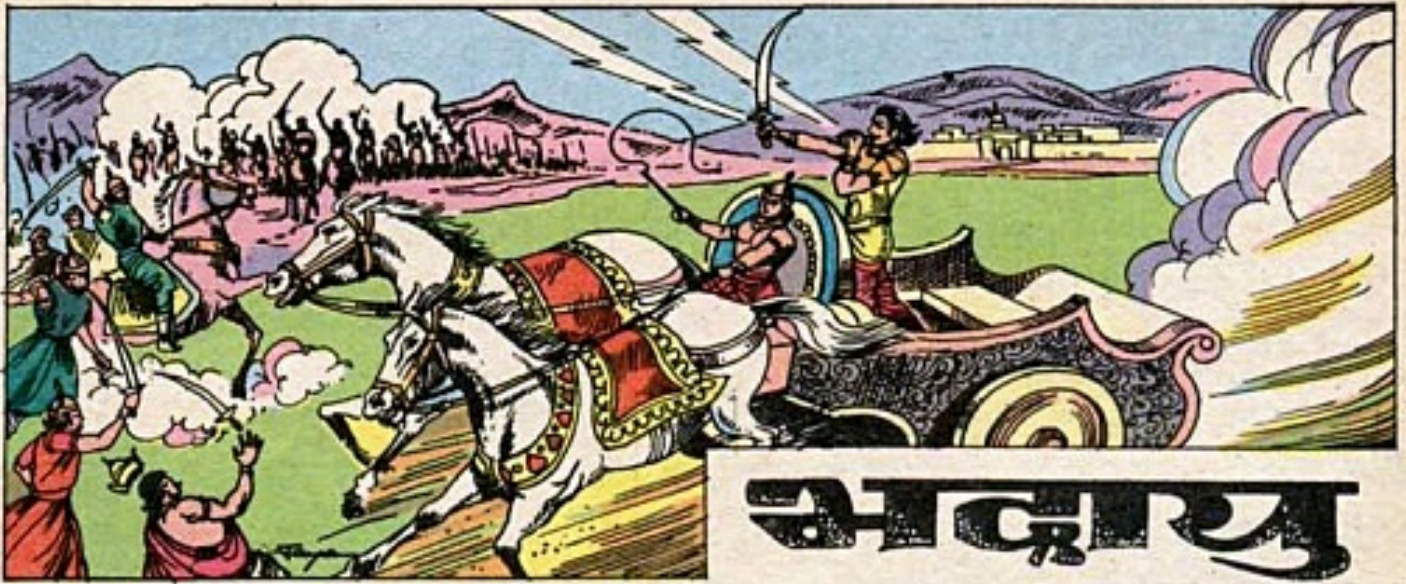
भद्रायु

दशार्ण देश के राजा वज्रबाहू थे। उनके सुमती नामक पत्नी के साथ अन्य रानियाँ भी थीं। सुमती जब गर्भवती हुई, तब इसे देख अन्य रानियाँ ईर्ष्या से भर उठीं और सुमती को कोई दवा पिलाई।

कालक्रम में सुमती ने एक पुत्र का जन्म दिया, मगर दवा के प्रभाव से माँ और पुत्र दोनों रोगी बन गये। इसे देख वज्रबाहू खीझ उठे और उन्हें जंगल में छोड़ आने का आदेश दिया।

जंगल से निकलकर सुमती अपने पुत्र को उठाकर वैश्यपुर में पहुँची। वहाँ के एक वैश्य की पत्नी ने उन पर रहम खाकर अपने घर आश्रय दिया। लेकिन एक दिन सुमती का पुत्र मर गया। सुमती अपने पुत्र-शोक में रो रही थी, तब ऋषभ योगी ने आकर सुमती को तत्वोपदेश किया और उसके दुख को दूर करना चाहा, फिर भी सुमती रोती ही रही। इस पर योगी ने मृत बालक पर कोई भस्म छिड़क दिया, उस बालक को जिलाकर उसका नामकरण भद्रायु किया। इसके बाद भद्रायु वैश्य-पुत्रों के साथ बढ़ता गया। थोड़े समय बाद ऋषभ योगी ने लौटकर भद्रायु को चन्द्रहास नामक खड्ग और शंख भी दिया।

एक बार मगध राजा ने वज्रबाहू को हराकर दशार्ण देश पर अधिकार कर लिया। यह समाचार मिलते ही भद्रायु अपने खड्ग और शंख को लेकर रथ पर सवार हुआ, अपने मित्र वैश्यकुमार को सारथी बनाकर अकेले ही मगध सेनाओं पर हमला कर बैठा। मगध राजा को हराकर दशार्ण देश को अपने पिता के हाथ सौंपकर वह वैश्यपुर को लौट आया। लेकिन वज्रबाहू को इस बात का पता न था कि युवक भद्रायु उसी का पुत्र है।

इसके बाद ऋषभ योगी ने चन्द्रांग नामक राजा के पास जाकर उसे भद्रायु का सारा वृत्तांत सुनाया और बताया– "राजन, आप अपनी पुत्री कीर्तिमालिनी का विवाह भद्रायु के साथ कर दीजिए।"

चन्द्रांग ने भद्रायु के पास विवाह का निमंत्रण-पत्र भेजा और अपनी पुत्री के विवाह के निमंत्रण अनेक राजाओं के पास भेजे। विवाह में भाग लेने के लिए जो राजा आये, उनमें वज्रबाहू भी थे। उन्होंने वर को देख पहचान लिया कि उसी ने उनके राज्य को वापस दिलाया है, तब उन्होंने राजा चन्द्रांग से पूछा–"यह लड़का किसका पुत्र है?"

"यह तो आप ही का पुत्र है।" इन शब्दों के साथ चन्द्रांग ने वज्रबाहू को सारा वृत्तांत सुनाया।

इस पर वज्रबाहू अपनी करनी पर पछताये और सुमती के साथ भद्रायु को भी अपने देश में ले जाकर भद्रायु का राज्याभिषेक किया।

राजा बनने के बाद भद्रायु एक विचित्र परीक्षा के शिकार हुए। एक दिन वह अपनी पत्नी के साथ वन-विहार करके एक वृक्ष की छाया में विश्राम कर रहे थे। उस वक़्त एक ब्राह्मण "बचाओ, बचाओ" चिल्लाते हुए वहाँ पर आ पहुँचा और उसने पत्नी को एक बाघ के द्वारा खींचकर ले जानेवाले दृश्य को दिखाया। भद्रायु ने बाघ पर कई बाणों का प्रयोग किया, पर कोई फ़ायदा न रहा।

"तुम्हारे शंख और खड्ग कहाँ? क्या तुम ऐसे असमर्थ राजा हो?" यों ब्राह्मण ने भद्रायु की निंदा की।

इस पर भद्रायु बोले–"आप चाहें तो मेरी पत्नी, मेरा शरीर और मेरा राज्य–इनमें से जो चाहें, सो ले लीजिए।"

"तुम बड़े ही साहसी हो। तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ही मैंने इस माया की सृष्टि की है।" यों समझाकर वह ब्राह्मण वहाँ से चला गया।

अतिथि - सत्कार

किसी देश के राजा और मंत्री अपने सारे देश का भ्रमण करते जनता की जरूरतों का पता लगाकर उनकी पूर्ति किया करते थे। एक बार वे दोनों चन्द्रपुर नामक गाँव के भद्रसेन नामक गृहस्थ के घर पहुँचे और पूछा—"महाशय! हम तो मुसाफ़िर हैं, क्या हमारे खाने का इंतजाम कर सकते हैं?"

"आप कितने लोग हैं?" यह सवाल करके पता लगाया कि दो ही मुसाफ़िर हैं, तब उसने उन्हें खाना खिलाने का वचन दिया और उस रात को उन्हें बड़ी अच्छी दावत दी।

इसके बाद वे दोनों ऊधमपुर नामक गाँव पहुँचे और जोधासिंह के घर जाकर वही सवाल किया—"भाई, क्या हमारे खाने का इंतजाम कर सकते हैं?"

"जी हाँ, जरूर करूँगा, पर बताइये कि आप लोग कितने हैं?" फिर उसने जान लिया कि दो ही यात्री हैं, उन्हें बढ़िया खाना खिलाकर संतुष्ट किया।

राजधानी में पहुँचते ही राजा ने मंत्री से कहा—"मंत्री महोदय, ऊधमपुर के जोधासिंह को उसकी जिंदगी भर मासिक दो सौ सिक्के भिजवाने का प्रबंध कीजिए।"

इस पर मंत्री ने पूछा—"महाराज, चन्द्रपुर के भद्रसेन ने भी हमें आतिथ्य दिया है न? उसके लिए भी तो थोड़ा-बहुत पुरस्कार का प्रबंध होना चाहिए न?"

"चन्द्रसेन ने हमें दो ही व्यक्ति जानकर तब खाने का इंतजाम करने को मान लिया है। अगर हम बीस आदमी बताते तो न मालूम क्या जवाब देता? मगर जोधासिंह ने पहले ही हमें खाना खिलाने का वचन दिया, तब खाने का प्रबंध करने के लिए हमारी संख्या पूछी। इसलिए उसी का आतिथ्य सत्कार के योग्य है।" राजा ने कहा।
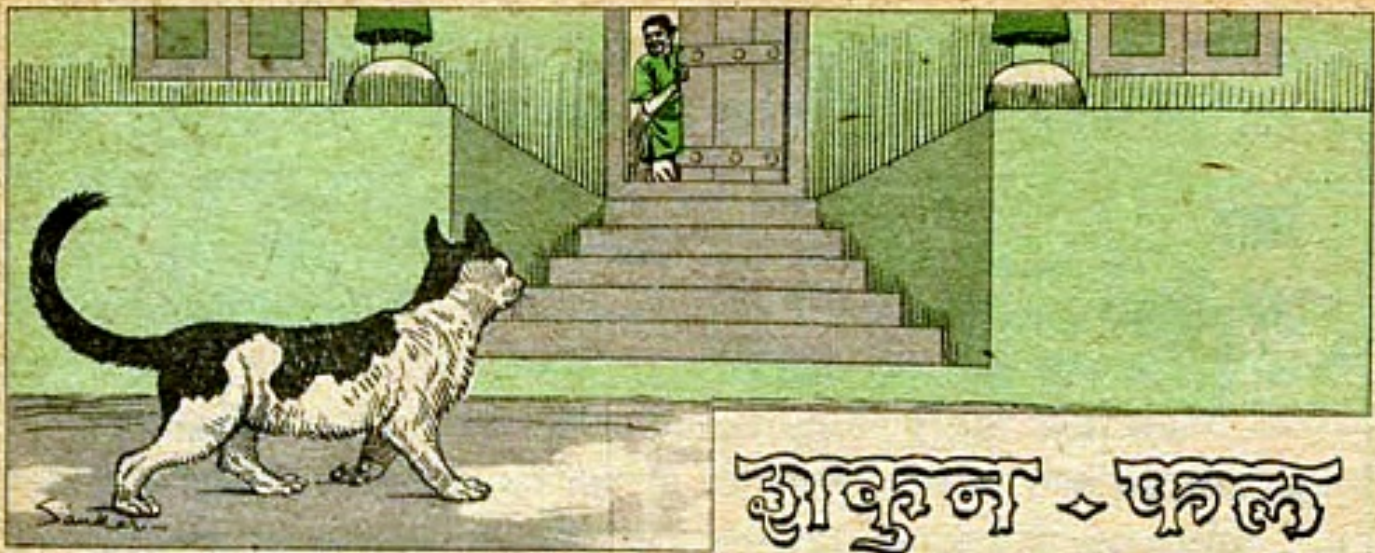
शकुन-फल

व्यापारी रामचन्द का शकुनों पर अपार विश्वास था। एक दिन शहर की हाट में जाने का निश्चय कर रामचन्द ने दर्वाजा खोला ही था कि पड़ोसी दुलीचन्द की पालतू बिल्ली सामने से आ गुजरी।

"धत्! आज नींद से जागते ही इस कमबख्त बिल्ली का चेहरा देखा है, न मालूम आज कैसी मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा।" यों खीझ उठा और फिर सो गया। इस खिजलाहट में शायद वह दर्वाजा बंद करना भूल गया। मौक़ा पाकर एक चोर घर में घुस आया, रामचन्द के गोलक को उठा लिया।

आहट पाकर रामचन्द उठ बैठा और चोर को देख चिल्ला उठा—"चोर! चोर! पकड़ लो।" इसके बाद वह चोर को पकड़ने गया, मगर चोर ने रामचन्द के सर पर दे मारा और अंधेरे में भाग गया।

रामचन्द यह सोचते बिल्ली को मन ही मन गालियाँ देने लगा कि आज जागते ही उसका चेहरा देखने के कारण ही गोलक खो गया है तब चोरी के बारे में फ़रियाद करने के ख्याल से वह शहर की ओर चल पड़ा।

शहर का कोत्वाल कोई और न था, रामचन्द का बहनोई भीमचन्द था। रामचन्द के व्यापार के वास्ते भीमचन्द ने बिना ब्याज के रुपये उधार दिया था। भीमचन्द कर्ज चुकाने के लिए रामचन्द को तक़ाजा देने लगा था, पर वह यही कहकर टाल देता था—"थोड़े दिन और ठहर जाओ! ज़्यादा फ़ायदा होने पर एक साथ सारे रुपये चुका दूंगा।"

इस कारण रामचन्द ने भीमचन्द से मिर्च-मसाला लगाकर चोरी का हाल बताया और कहा—"बहनोईजी! मैंने गोलक के

रमा श्रीवास्तव

सारे रुपये तुम्हें देने के लिए ही सुरक्षित रखा था, तुम उस चोर को पकड़ लोगे तो तुम्हारा कर्ज चुक जाएगा। वरना तुम्हारे कर्ज के रुपये जमा करने के लिए न मालूम मेरे लिए कितना समय लगेगा। वास्तव में उस कमबख्त बिल्ली की वजह से ही यह चोरी हो गई है।"

भीमचन्द ने सारी बातें सुनकर समझाया—"मैं चोर को पकड़वाने की पूरी कोशिश करूँगा, लेकिन बिल्ली और चोरी का क्या वास्ता है? मैंने भी आज सुबह नींद से जागते ही बिल्ली का चेहरा देखा है, इसलिए क्या मेरे घर में चोरी गई है? तुम अभी घर जाकर खाना खाकर आ जाओ! तुम्हारी बहन इधर कई दिनों से तुम्हारी याद करती है।" यों समझाकर रामचन्द को घर भेज दिया।

रामचन्द खाना खाकर थोड़ी देर अपनी बहन से बातचीत करता रहा, तब थाने में लौट आया। तब तक हाट में एक चोर को चोरी करते देख सिपाही उसे थाने में पकड़ लाये। हाट में वह किसी की जेब काट रहा था।

भीमचन्द चोर से कई सवाल कर रहा था, तभी रामचन्द ने उस चोर को देख चिल्लाकर कहा—"बहनोई साहब! इसी ने रात को हमारे घर में चोरी की और मुझे पीटकर भाग गया है। वाह, तुम कैसे होशियार हो! कुछ ही घंटों में तुमने चोर को पकड़ लिया है।"

चोर ने भी रामचन्द को देखते ही पहचान लिया। उसने सोचा कि झूठ बोलने पर कोत्वाल उसकी चमड़ी उधेड़ डालेगा, उसने चोरी की बात मान ली और गोलक को छिपाने की जगह भी बता दी।

इसके बाद चोर ने अपना हाल सुनाया– "मैंने अपनी ज़िंदगी में कई चोरियाँ कीं, मगर आज तक मैं पकड़ा नहीं गया, आज सुबह नींद से जागते ही मैंने बिल्ली का चेहरा देखा। मेरी औरत ने बहुतेरे समझाया कि आज तुमने सुबह ही सुबह बिल्ली का चेहरा देखा है, इसलिए चोरी करने मत जाओ। लेकिन मैंने उसकी बात नहीं मानी, इसलिए पकड़ा गया।

इस पर भीमचन्द ने रामचन्द से कहा– "साले साहब! आज सुबह नींद से जागते ही मैंने बिल्ली का चेहरा देखा है, इसलिए मेरा फ़ायदा ही हुआ। मैंने सोचा था कि मेरा क़र्ज तुमसे अब वसूल न होगा, आज मैंने बड़ी आसानी से उसे वसूल किया है।"

रामचन्द को पहले इस बात की खुशी ही हुई कि उसका खोया हुआ धन वापस मिल गया है, मगर वह धन क़र्ज चुकाने में ही चुक गया। उसका उपयोग वह थोड़े और दिन तक कर न पाया। यों पछताते हुए रामचन्द अपने गाँव को लौट आया।

गाँव में क़दम रखते ही दुलीचंद उदासपूर्ण चेहरा लिये सामने से आ गुजरा। उसे चिंतित देख रामचन्द ने पूछा–"क्यों भाई दुलीचंद! आज उदास क्यों हो?"

"क्या बताऊँ रामचन्द? मेरी प्यारी बिल्ली आज अचानक एक गाड़ी के नीचे आकर मर गई है। बेचारी ने न मालूम आज सुबह ही सुबह उसने किसका चेहरा देख लिया है!" दुलीचंद ने जवाब दिया।

रामचन्द को याद आया कि उस बिल्ली ने सुबह सबसे पहले उसी का चेहरा देखा है। उसका चेहरा सफ़ेद हो उठा।

दीवार

लक्ष्मी प्रसाद ने बहुत सारा धन कमाया। वह सब उसकी मेहनत का फल था। इसलिए उस धन का अपव्यय होना वह कभी पसंद नहीं करता था। घर का प्रत्येक खर्च उसके हाथ से ही किया जाता था। वह कभी अपनी पत्नी के हाथ एक फूटी कौड़ी भी देता न था।

एक बार लक्ष्मी प्रसाद की रसोइन ने अचानक काम पर आना बंद कर दिया। अब लक्ष्मी प्रसाद के लिए एक और रसोइन की ज़रूरत आ पड़ी।

दूसरे दिन अचानक एक अधेड़ उम्र की औरत लक्ष्मी प्रसाद के घर आ धमकी, बोली–"मेरा नाम सावित्री है, आप के घर रसोई बनाने आई हूँ। आप की पुरानी रसोइन ने ही मुझे भेज दिया है।"

वह औरत साफ़-सुथरी और ईमानदार जैसी लगी। इस पर लक्ष्मी प्रसाद ने प्रसन्न होकर पूछा–"सुनो, रोज हमारे घर जो खाना बचता है, वह तुम ले जाओगी या नौकरानी को ले जाने दोगी?"

सावित्री ने मुस्कुराकर कहा–"मैं रसोई बनाती हूँ तो बचने की नौबत ही नहीं आयेगी। मैं इस तरह रसोई बनाती हूँ जैसे तौलकर बनायी जाती हो।"

सावित्री की किफ़ायती पर लक्ष्मी प्रसाद ख़ुश हुआ और बोला–"तुम इस जून खाना बनाओ, कल से तुम काम पर लग जाओगी।" इन शब्दों के साथ लक्ष्मी प्रसाद सावित्री को अपनी पत्नी के हाथ सौंपकर काम पर चला गया।

लक्ष्मी प्रसाद के बाहर जाते ही उसकी पत्नी ने सावित्री को समझाया–"सुनो, नौकरी देने तक का काम मेरे पति का है। इसके बाद तुम पर मेरा अधिकार होगा। तुम अगर इस घर के भेद को खोल दोगी

जगन्नाथ तिवारी

तो तुम्हारी नौकरी छूट जाएगी, समझी ?"

सावित्री पर जल्द ही उस घर का भेद खुल गया। लक्ष्मी प्रसाद के नाम से ही सारा घर कांप उठता है। वह घर के किसी भी व्यक्ति को कोई कमी होने नहीं देता। फिर भी घर का कोई भी सदस्य उससे प्यार नहीं करता। इसका कारण यह है कि वह किसी पर भरोसा करके एक कौड़ी भी नहीं देता। घर के सभी लोगों का यही विचार है कि लक्ष्मी प्रसाद एक कंजूस है। अपने पिता के बाहर जाते ही उस घर के बच्चे अट-पटी चीज़ें खरीदवा देने के लिए अपनी माँ को तंग करते हैं। उन बच्चों को खुश करने के लिए माँ घर के लिए मंगाई गई चीज़ें गुप्त रूप से बेचकर वे पैसे अपने पास रख लेती है। इस वास्ते वह घर की जरूरतों से बढ़कर ज़्यादा माल लक्ष्मी प्रसाद के हाथों से ख़रीदवा देती है। बची हुई चीज़ें नौकरानी के द्वारा दूकानों में बिकवा देती है।

यह भेद जब सावित्री पर खुला, उसने मालिकिन से पूछा—"मालिकिन! आप जरूरत से दुगुनी चीज़ें मालिक से खरीदवा देती हैं; मालिक को यह बात मालूम हो जाए तो क्या वे यह न सोचेंगे कि मैं ही ये सारी चीज़ें अनावश्यक खर्च करती हूँ?"

"तुम्हें डरने की कोई जरूरत नहीं है। मालिक जो ख़र्च कर डालते हैं, उसके बारे में वे फिर कभी चिंता नहीं करते।" लक्ष्मी प्रसाद की पत्नी ने समझाया।

मगर सावित्री को यह तरीक़ा बिलकुल पसंद न आया। एक ही परिवार के लोग उसके मालिक को पराये मनुष्य के रूप में देखते हैं, यह बात सहन नहीं कर पाई।

एक दिन किसी कारण से नौकरानी काम पर न आई। लक्ष्मी प्रसाद की पत्नी ने उसी दिन खरीदे गये पाँच किलो घी में से आधा घी सावित्री के हाथ देकर बेच आने को कहा।

सावित्री ने घी बेच डाला। उसके पैसे व बर्तन लेकर वह आंगन के रास्ते से अंदर आ गई। वह जानती थी कि मालिक लक्ष्मी प्रसाद बैठक में ही आराम करते होंगे। उसने घी के बेचे गये पैसों में से एक सिक्का निकालकर लक्ष्मी प्रसाद के हाथ दिया और पूछा–"मालिक, यह तो खोटा सिक्का तो नहीं है न!"

लक्ष्मी प्रसाद ने सिक्के को खनखनाकर देखा, तब कहा–"यह सिक्का तो चलता है। लेकिन यह तुम्हारे हाथ कैसे आ गया?"

"मैंने घी बेच दिया तो दूकानदार ने यह सिक्का मेरे हाथ दिया है।"

"घी बेचना कैसा?" मालिक ने आश्चर्य में आकर पूछा। सावित्री ने भय का अभिनय करते सारा समाचार सुनाया और कहा–"मालिक, यह कोई नई बात नहीं है। रोज ऐसा ही चलता है।"

लक्ष्मी प्रसाद क्रोध से भर उठा और अपनी पत्नी को बुलाकर उसे ख़ूब डांटा-

फटकारा। लक्ष्मी प्रसाद की पत्नी अपने पति को कोई सही उत्तर दे न पाई।

"जवाब क्यों नहीं देती?" लक्ष्मी प्रसाद ने गरजकर पूछा।

"मालिक! शांत हो जाइये। वास्तव में गलती तो आप की है। आप मालिकिन के हाथ अकसर परिवार के अतिरिक्त खर्च के वास्ते पैसे देते रहते तो वह यों करतीं? बच्चे तो खाने व खेलने की चीज़ें खरीदने के वास्ते पैसों की माँग करते हैं। अचानक घर के लिए आवश्यक कोई चीज़ बाजार में बिक्री के लिए आ जाती है, हर चीज़ के वास्ते पति से पैसे माँगना संभव नहीं हो पाता है। यह कोई अच्छी बात नहीं है। उन्होंने यह जो काम किया, इस कारण वह अपने बच्चों व नौकरानियों की दृष्टि में गिर जाती है। औरों की बात क्यों? मेरे पति अगर जब-तब मेरे हाथ थोड़े-बहुत पैसे देते होते मैं इस रसोइन के काम से ही छुट्टी पा जाती। मैं जानती हूँ कि मैंने आप के घर का यह भेद खोल दिया है, इससे मेरी यह नौकरी छूट जाएगी।" यों कहकर सावित्री ने सारे पैसे लक्ष्मी प्रसाद के हाथ दिये और वह अपने घर जाने को तैयार हो गई।

मगर सावित्री के द्वारा ड्योढ़ी पार करने के पहले ही उस घर के मालिक व मालिकिन की पुकार एक साथ उसे सुनाई दी–"सावित्री, कल तुम सही वक़्त पर काम पर आ जाओ।" पति-पत्नी में यह परिवर्तन देख सावित्री खुश हो गई, बीमारी की वजह से खाट पकड़े अपने पति के वास्ते मौसंबी खरीदकर घर चल पड़ी।

एक मौसंबी के छिलके निकालकर अपने पति के हाथ देते बोली–"तुम्हारे हाथ-पैर लकवे के मारे बेकाम हो गये और खाट पकड़ चुके हो, फिर भी आज तुम एक अच्छे उदाहरण बन गये हो! तुम्हारा नाम लेकर आज मैंने एक दंपति के बीच की दीवार को तोड़ डाला।"

सावित्री के मुंह से सारी कहानी सुनकर उसका पति भी खुश हो उठा।

असमर्थ राजा

एक राजा ने अपने मंत्री से कहा–"मेरा छोटा पुत्र किसी से मिलता-जुलता नहीं, बात भी नहीं करता, हमेशा अकेला रहता है, उसको लेकर मुझे बड़ी चिंता हो रही है।"

मंत्री ने मुस्कुराकर कहा–"महाराज, दल बांधकर घूमनेवाले कौए ज्ञान हीन हैं, ज्ञानी चील हमेशा अकेले ही विहार करते हैं।" इसके थोड़े दिन बाद राजा ने फिर मंत्री से कहा–"मेरे बड़े पुत्र युवराज ऐरे-गैरों को बुलवाकर उनके साथ अपना समय काटता है, इस बात को लेकर मुझे बड़ी चिंता हो रही है।"

मंत्री ने मंदहास करके कहा–"शक्तिशाली उकाब मच्छरों के साथ दोस्ती करके उनकी मदद से अपने आहार का पता लगाते हैं और मजे से अपने दिन बिताते हैं।"

इस पर राजा ने पल भर सोचकर कहा–"तब तो मेरा छोटा पुत्र योग्य है और बड़ा पुत्र भी। इसका मतलब है कि उनकी चिंता करनेवाला मैं ही असमर्थ हूँ।"

मंत्री ने कोई जवाब न दिया, मौन रह गया।

अद्भुत जड़ी-बूटी

श्रीगुप्त दस गांवों का जमींदार था। वह सदा-सर्वदा उन गांवों की उन्नति के बारे में सोचा करता, नई-नई योजनाएँ अमल करके उनके सफल होते देख खुश हो जाता था। उसके एक जवान लड़का था जयगुप्त। जयगुप्त अपने पिता के काम में सलाह देता और पिता की योजनाओं को भली भांति समझने का प्रयास करता था।

श्रीगुप्त के शासन की सामर्थ्य के बारे में राजा ने भी सुना और उसे अपने दरबार में बुलवा भेजा। राजदरबार में जाने के पहले श्रीगुप्त ने अपने पुत्र को समझाया—"बेटा, राजा का बुलावा पाकर न जाने से उचित न होगा। मेरी गैर हाज़िरी में जनता के लिए कोई कमी मत होने दो। तुम बड़ी होशियारी से अपने कर्तव्य का पालन करो। अगर तुम्हें कोई कठिनाई महसूस हो, तो उसी वक़्त मेरे पास ख़बर भिजवा दो।"

राजा ने श्रीगुप्त के मुंह से शासनकार्य संबंधी अनेक रहस्य जान लिये; प्रति दिन श्रीगुप्त के अनुभव सुनते, राजकार्यों की चर्चा करते। राजा ने कई दिनों तक अपने अतिथि के रूप में रख लिया।

लेकिन श्रीगुप्त का मन अपने गाँवों, उनके कार्य-कलापों तथा उसके पुत्र पर ही लगा रहा। अंत में राजा से उसने निवेदन किया कि उसे विदा कर दे। राजा ने उसका अच्छे ढंग से सत्कार किया और राजसम्मान के साथ विदा किया।

श्रीगुप्त ने अपने घर पहुँचकर देखा कि उसकी गैर हाज़िरी में भी शासनकार्यों में कोई कमी नहीं हुई है। उसके पुत्र जयगुप्त ने जमीन्दारी के शासन के कार्यों को बड़ी दक्षता के साथ संभाला है।

रमाकांत श्रीवास्तव

अपने पिता के लौट आने के बाद भी जयगुप्त किसी की सलाह लिये बिना शासनकार्य संभालता रहा, उन कार्यों में श्रीगुप्त को कोई तृटि दिखाई न दी।

थोड़े दिन बाद जयगुप्त को ऐसा मालूम हुआ कि श्रीगुप्त का स्वास्थ्य क्रमश: गिरता जा रहा है। जयगुप्त के पूछने पर श्रीगुप्त ने बताया कि वैसे उसे कोई तक़लीफ़ नहीं है। जयगुप्त ने वैद्यों को बुलवाकर अपने पिता की बीमारी का निदान करने की प्रार्थना की। वैद्यों ने श्रीगुप्त की जांच करके बताया कि श्रीगुप्त की देह में कोई बीमारी नहीं है।

पर जयगुप्त इससे संतुष्ट नहीं हुआ। क्योंकि श्रीगुप्त से भी ज्यादा उम्रवाले व्यक्ति उनसे कहीं ज्यादा स्वस्थ हैं। इसलिए यह मानने में कोई संदेह नहीं रहा कि श्रीगुप्त अस्वस्थ हैं। आखिर जयगुप्त ने इस बात का ढिढ़ोरा पिटवा दिया कि जो व्यक्ति उसके पिता को पूर्ण स्वस्थ बनायेगा, उसे एक हज़ार सोने के सिक्के पुरस्कार के रूप में दिये जायेंगे।

यह ढिढ़ोरा सुनकर एक युवक श्रीगुप्त के घर पहुँचा। उसकी जांच करके बताया—"महाशय, यह तो एक अनोखी बीमारी है। इसके इलाज में काम देनेवाली जड़ीबूटी हिमालयों में ही मिल सकती है, इसे बीमार व्यक्ति की संतान में से किसी एक को खुद लाना होगा।"

आखिर पिता के मना करते रहने पर भी जयगुप्त हिमालयों में जाने को तैयार हो गया और उस युवक को अपने साथ चलने को कहा। वह युवक जयगुप्त को साथ लेकर उस जड़ीबूटीवाले प्रदेश में ले गया। कई दिन तक श्रम उठाकर दोनों ने उस प्रदेश को छान डाला।

अंत में उस युवक ने जयगुप्त से कहा—"हमें जिस जड़ीबूटी की ज़रूरत थी, वह इस समय यहाँ नहीं मिल रही है, शायद और कहीं मिल जाय तो मैं नहीं जानता।"

जयगुप्त ने खीझकर कहा–"ऐरे-गैरे और नत्थूखैरे इलाज करने लग जाते हैं, तो उसका हाल यही होता है।"

आखिर वे दोनों घर की ओर चल पड़े। उनके घर पहुँचते-पहुँचते दो महीने लग गये। अपने पिता की बीमारी के बारे में हर क्षण घबराते हुए जयगुप्त घर लौटा और अपने पिता को पूर्ण स्वस्थ पाकर वह चकित रह गया।

श्रीगुप्त इधर-उधर घूमते अपने सारे काम स्वयं देख रहा था। जयगुप्त को अपनी सारी मेहनत याद आई और उसे खुशी हुई।

युवक ने जयगुप्त को अलग बुलाकर कहा–"मुझे अपना पुरस्कार दे तो मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा।"

इस पर जयगुप्त का क्रोध भड़क उठा। उसने कहा–"अबे, चुप रहो! तुमने किसी जड़ीबूटी की बात बताकर मुझे हिमालयों में ले गये, नाना प्रकार से सताया, अब उल्टे पुरस्कार भी माँगते हो?"

युवक ने मुस्कुराकर कहा–"उस जड़ीबूटी की महिमा से ही तुम्हारे पिता स्वस्थ हो गये हैं। उनको सतानेवाली असली बीमारी अधिकार की लालसा है। वे राजा के अतिथि बनकर जब गये, उस वक़्त उन्होंने तुम को जो अपना अधिकार सौंपा, वह उनके लौटने पर तुमने उन्हें नहीं सौंपा। मैं जड़ीबूटी का बहाना बनाकर तुम्हें दो महीने तक दूर ले गया। जब मैंने कहा कि उस जड़ीबूटी को तुम्हें खुद उखाड़कर लाना होगा, तभी तुम्हें मेरी चाल को भांप लेना चाहिए था। तुम्हारे जाते ही तुम्हारे पिता ने फिर से अपना अधिकार चालू रखा और वे स्वस्थ हो गये।"

"अगर मैंने तुम्हारी चाल को भांप लिया होता तो?" जयगुप्त ने कहा।

"मैंने भी सच्ची बात बता दी होती! तुम्हें नाहक़ हिमालयों में घूमने से छुट्टी मिल जाती!" युवक ने कहा।

जयगुप्त ने उसकी बातों की सचाई भांप ली और उसे पुरस्कार देकर भेज दिया।

विष्णु की सलाह के अनुसार ब्रह्मा आदि सबने महादेवी की प्रार्थना की। महादेवी प्रत्यक्ष हो गईं। देवताओं ने उनकी स्तुति करके निवेदन किया–"महादेवीजी! कंस आदि दुष्टों के कारण पृथ्वी का जो भार बढ़ गया है, उसे सहन न कर सकने की हालत में भूदेवी आप की शरण में आई हुई हैं। हरि, हर आदि जिन राक्षसों का वध न कर पाये, आप ने उनका संहार किया, इसलिए आप उनके भार को उतार दीजिए।

"माताजी! महाशक्ति की सहायता के विना कोई कुछ नहीं कर सकते! ब्रह्मा के लिए सरस्वती, विष्णु के लिए लक्ष्मी, तथा शिवजी के लिए पार्वती के होने के कारण ही वे अपने कर्तव्य कर पा रहे हैं। वरना वे लोग कर ही क्या सकते थे?" इन्द्र ने कहा।

"देवी! आप की सहायता के विना हम त्रिमूर्ति भी शक्ति हीन हैं। किसी की सहायता के विना सब के लिए समर्थ आप अकेली ही हैं।" विष्णु ने कहा।

इन प्रशंसाओं से संतुष्ट होकर जगदांबा ने पूछा–"अच्छी बात है! यह बताइये कि आप लोग मुझसे क्या चाहते हैं?"

इस पर देवताओं ने कहा–"माताजी! समस्त राजा पापात्मा बनकर भूदेवी को कष्ट पहुँचा रहे हैं। भूदेवी इस भार को वहन न कर सकने की हालत में रो रही हैं। इसलिए हम सब उनके भार को कम करने की आप से प्रार्थना करते हैं।

आप ने इसके पूर्व दानवों के बल पर अहंकार करनेवाले महिसासुर का दर्प चूर किया, शुंभ और निशुंभ का संहार किया। रक्तबीज का वध किया। चण्ड, मुण्ड आदि राक्षस, धूम्रलोचन, दुर्मुख, दुस्सह, कराळ आदि आप के हाथों में काम आये। इसलिए अब पृथ्वी के भार को कम करके आप हम पर अनुग्रह कीजिए।"

ये बातें सुन महादेवी मुस्कुराकर बोलीं— "जरासंध आदि दुष्टों का वध करने का मैंने पहले ही निर्णय लिया है। तुम सब अपने अपने अंशों के साथ पृथ्वी पर मानवों के रूप में जन्मधारण कर लो। कश्यप यादव वंश में वसुदेव के रूप में जन्म लेंगे। भृगु के शाप के शिकार हुए विष्णु उनके पुत्र के रूप में अवतार लेंगे।

नंद और यशोदा की पुत्री के रूप में जन्म लेकर मैं प्रसन्नतापूर्वक समस्त कार्यों का निर्वाह करूँगी। कारागार में जन्म लेनेवाले विष्णु को मैं गोकुल में भिजवा दूंगी। देवकी के गर्भ में स्थित शेष को मैं रोहिणी के गर्भ में बदल डालूंगी। मेरी शक्ति की मदद से बलराम और कृष्ण द्वापर युग के अंत में सभी दुष्ट राक्षसों का संहार करेंगे। इंद्र के अंश में जन्म लेकर अर्जुन सभी राजाओं का वध करेंगे। यम के अंश से युधिष्ठिर, वायु के अंश से भीम, अश्विनी के अंशों से नकुल और सहदेव, वसु के अंश में पैदा होनेवाले भीष्म दुष्टों का संहार करेंगे। तुम लोगों को साधन बनाकर मुझे जो कुछ करना है, सब करूँगी। अब तुम लोग अपने-अपने निवासों को लौट जाओ।" यों समझाकर महादेवी अंतर्धान हो गईं।

कालिंदी के तट पर ऊँचे वृक्षों से भरा एक सुंदर मधुवन था। उसमें लवण नामक एक दुष्ट राक्षस और मधु नामक उसका पुत्र रहा करते थे। ब्राह्मणों को सतानेवाले उन राक्षसों को शत्रुघ्न नामक राजा ने मार डाला और उस बन में एक नगर बसाया, वही मथुरा नगर है।

मगर शत्रुघ्न के वंशधरों ने अधिक समय तक उस नगर पर शासन नहीं किया, इसके बाद मथुरा नगर यदुवंशी राजाओं के अधीन हो गया। उस पर ययाति के पुत्र शूरसेन ने शासन किया। वरुण के द्वारा शपित होकर कश्यप शूरसेन के पुत्र बनकर वसुदेव के नाम से विख्यात हुए। अदिति देवकी नाम से पैदा होकर वसुदेव की पत्नी बनी। लेकिन वसुदेव ने वैश्यवृत्ति का अवलंबन किया, इस कारण मधुवंश में जन्म लेनेवाले उग्रसेन मथुरापुर पर शासन करने लगे। कंस उनका पुत्र है, देवकी उग्रसेन के भाई देवक की पुत्री है।

देवक ने देवकी का विवाह वसुदेव के साथ किया। विवाहोत्सव के संदर्भ में आकाशवाणी यों सुनाई दी–"हे कंस, इस देवकी के पुत्रों में से आठवाँ पुत्र तुम्हारा वध करेगा।"

ये बातें सुन कंस घबरा गया। उसने सोचा कि देवकी का वध करने पर उसका खतरा टल सकता है। मगर उसकी अंतरात्मा इस भावना से व्यथित हो उठी कि अपनी बहन का वध करना क्या उचित है? फिर भी उसने सोचा कि उसके मरने से देवकी का वध करना कहीं अच्छा है। क्योंकि प्राण के रहते किसी भी पाप का

प्रायश्चित किया जा सकता है, ऐसी हालत में कोई भी पाप करके प्राण को बचाना है न?

यों विचारकर कंस सब के देखते तलवार हाथ में लेकर देवकी का जूडा दूसरे हाथ में कसकर उसका सर काटने को तैयार हो गया। उस कठिन हृदयवाले के मन में यह विचार न आया कि देवकी उसकी बहन है और उसने उसका कोई अहित नहीं किया है।

उस वक़्त अगर वसुदेव ने कंस को रोका नहीं होता तो देवकी का सिर कट गया होता। उसी समय सभी यादव वीर एक होकर चिल्ला उठे–"अरे दुष्ट! तुम

कैसा अनर्थ करने पर तुले हुए हो!" यों चेतावनी दे वे सब कंस से लड़ने को तैयार हो गये। इस पर कंस को देवकी को छोड़ यादवों का सामना करना पड़ा।

वहाँ पर उपस्थित वृद्ध लोगों ने उस लड़ाई को रोककर कंस को समझाया– "बेटा, देवकी तो वधू है, तिस पर तुम्हारी बहन है। क्या तुम उसका वध करोगे? क्या तुम यह समझते हो कि सचमुच आकाशवाणी ने ही ये बातें बताई हैं? किसी मिथ्यावादी ने वसुदेव का अहित करने के ख्याल से तथा तुम्हारा अपयश करने की दुर्बुद्धि से प्रेरित होकर यह जादू किया है। क्या बुद्धिमान लोग उस जादू पर विश्वास करते हैं? मान लो कि ये शब्द आकाशवाणी के ही हैं, तब जो होना है, उसे क्या तुम टाल सकते हो?"

इस पर वसुदेव ने भी कंस को यह अभय प्रदान करते हुए कहा–"हे कंस, तुम्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं है! मैं इन सब बुज़ुर्गों के सामने शपथ खाकर कहता हूँ कि देवकी के गर्भ से पैदा हुए सभी बच्चों को तुम्हारे हाथ सौंप दूँगा। तुम उनका वध कर डालो। अगर मैं अपने इस वचन से मुकर जाता हूँ तो मेरे पुरखे नरक को प्राप्त होंगे।"

उस समय सबने कंस को समझाया कि चाहे सूर्य और चन्द्र की भी गति बदल सकती है, पर वसुदेव अपने वचन से मुकर नहीं सकते! तब कंस ने वसुदेव की बात पर विश्वास करके अपनी पकड़ को ढीला किया। इस पर वसुदेव देवकी को अपने घर ले जाकर सुखपूर्वक अपना समय बिताने लगे।

थोड़े समय बाद देवकी गर्भवती हो गई और उसने एक सुंदर पुत्र का जन्म दिया।

उस वक़्त वसुदेव ने देवकी को समझाया–"मैं इस लड़के का वध करने के लिए इसे कंस के हाथ सौंप दूँगा। तुम दुखी मत होओ! प्रारब्ध को कोई टाल नहीं सकता।"

इसके उत्तर में देवकी ने कहा–"प्रारब्ध को टालने के कई उपाय हैं न? क्या बुजुर्गों ने नहीं बताया है कि अपने पापों का परिहार करने तथा स्वर्ग पाने के लिए तीर्थयात्राएँ करनी चाहिए? सत्कर्मों के द्वारा क्या पापों का परिहार नहीं होता? क्या मनु आदि धर्मशास्त्रवेत्ताओं ने जो कुछ बताया है, वह झूठ है? यह मानना विवेक की बात नहीं है कि होनी होकर ही रहेगी? लोग स्पष्ट देखते हैं कि हम जो प्रयत्न करते हैं, उसका अवश्य फल मिलता है! वरना वेद, यज्ञ, महामुनि, महान औषध इत्यादि झूठ ही हैं न? अब आप कोई उपाय सोचिये!"

वसुदेव ने कहा–"केवल प्रयत्न के द्वारा ही फल नहीं मिलता, ईश्वर के अधीन का प्रयत्न ही सफल होता है! वर्तमान में हम जो कुछ करते हैं, उसका प्रायश्चित्त होता है, लेकिन प्रारब्ध के लए कोई प्रायश्चित्त नहीं होता। सारहीन इस जीवन में सत्य ही एक मात्र सार तत्व है। सत्य के वास्ते जो लोग सुख-दुखों की परवाह नहीं करते, उनका शुभ होता है। इसलिए तुम इस शिशु को कंस के हाथ सौंपने के लिए मान जाओ।"

इस पर रोते हुए देवकी ने अपने प्रथम शिशु को अपने पति के हाथों में रख दिया। अपने शिशु को कंस के पास ले जानेवाले वसुदेव को देख सबने उनकी प्रशंसा की। उसी समय पैदा हुए शिशु को लाकर अपने हाथ में सौंपनेवाले वसुदेव

की कंस ने भी बड़ी प्रशंसा की–"मेरा वध करनेवाला शिशु देवकी के अष्टम गर्भ में पैदा होनेवाला है। इस शिशु के साथ मेरा काम ही क्या है? आप ही इसे ले जाकर पाल लीजिए।"

इस पर वसुदेव उस शिशु को लेकर लौट गये। तब कंस ने अपनी करनी का परिचय अपने मंत्रियों को दिया। कंस की उसके मंत्रियों ने भी बड़ी तारीफ़ की।
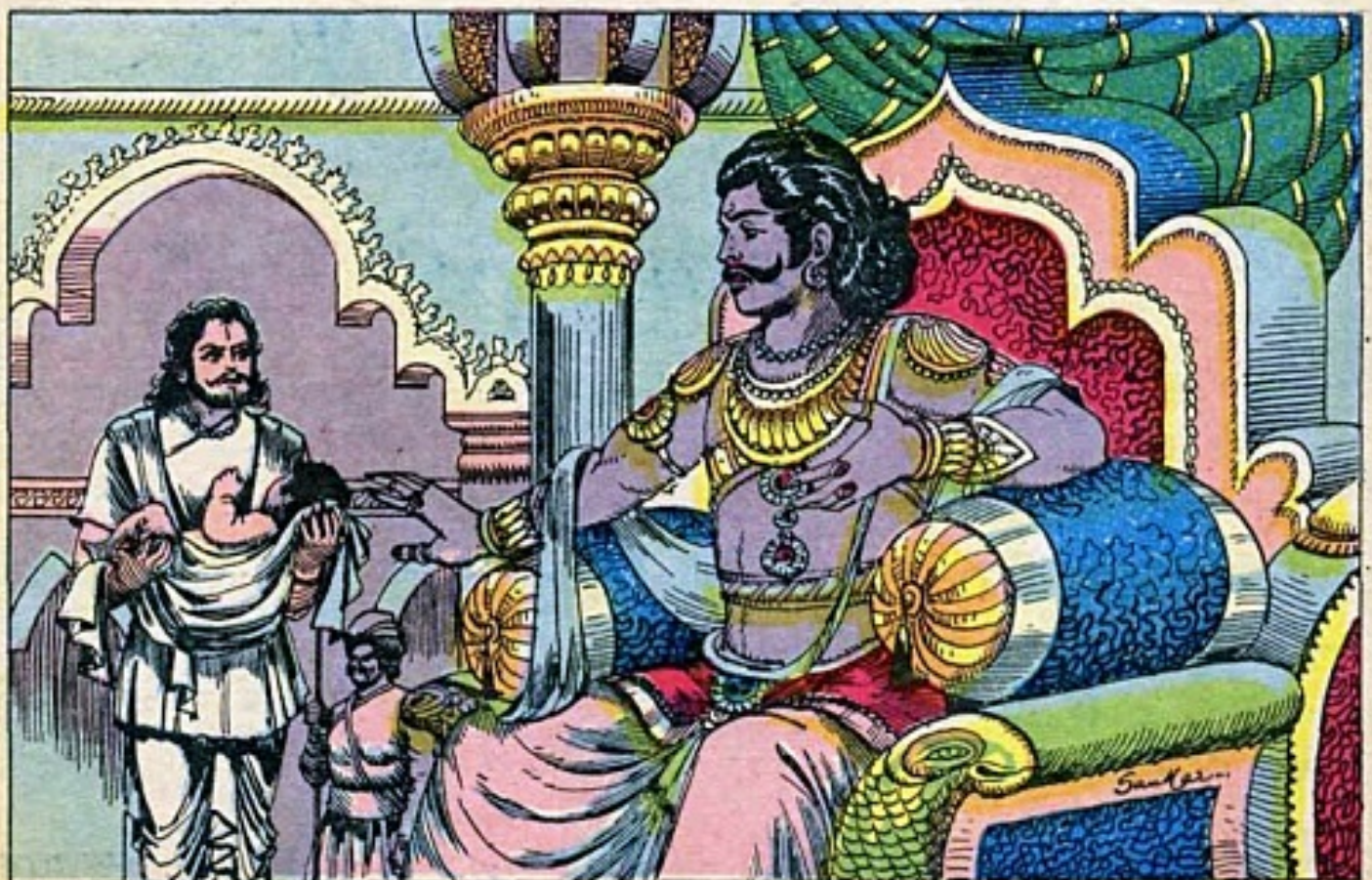
थोड़े समय बाद कंस के पास नारद महामुनि आ पहुँचे। कंस ने नारद का अर्घ्य व पाद्यों से सत्कार किया। नारद ने कंस से कहा–"हे पगले, तुमने देवकी के शिशु का वध किये बिना छोड़ दिया; कैसे मूर्ख हो! मैंने स्वयं अपने कानों से सुना है कि देवताओं ने तुम्हारा वध कराने के लिए विष्णु को देवकी के गर्भ से पैदा होने की योजना बनाई है।"

"आकाशवाणी ने बताया है कि मेरी मृत्यु देवकी के अष्टम गर्भ से होनेवाली है। ऐसी हालत में मैं प्रथम शिशु की हत्या क्यों करूँ?" कंस ने पूछा।

"तुम देवताओं की माया को समझ नहीं पाते हो! यह बात सही है कि देवकी के आठवें पुत्र ही तुम्हारी हानि करनेवाले हैं। पर उन्हें बाक़ी सातों का सहारा मिले तो उनका वध करना तुम्हारे लिए और कठिन हो जाएगा न?" नारद ने समझाया।

नारद के चले जाने पर कंस ने देवकी के प्रथम शिशु को मंगाया और पत्थर पर पीटकर उसे मार डाला। नारद के द्वारा देवकी के शिशुओं को जान-बूझकर मरवा डालने के पीछे एक महत्वपूर्ण कारण है।

स्वायंभुव मन्वंतर में मरीचि के ऊर्णा नामक पत्नी के द्वारा छे पुत्र पैदा हुए। एक बार उन लोगों ने यह कहकर ब्रह्मा की अवहेलना की कि उन्होंने अपनी पुत्री को ही पत्नी बनाया है।

इस पर ब्रह्मा ने क्रोध में आकर उन्हें राक्षसों के रूप में पैदा होने का शाप

दिया। उस शाप के कारण वे लोग एक जन्म में कालनेमि के पुत्रों के रूप में पैदा हुए और दूसरे जन्म में हिरण्यकश्यप के पुत्रों के रूप में।

उस अवसर पर उन लोगों ने शाप से मुक्त होने के लिए ब्रह्मा के प्रति तपस्या की। ब्रह्मा ने प्रत्यक्ष होकर कहा—"मैंने उस वक़्त क्रोध में आकर तुम लोगों को शाप दिया है, अब तुम लोग कोई वर माँग लो।"

इस पर उन छठों ने निवेदन किया—"भगवान! अगर आप हमें वर देना चाहते हैं तो ऐसा वर दीजिए जिससे हम लोग देवता, राक्षस और मानवों के द्वारा मृत्यु को प्राप्त न होवे! तब हम निश्चित हो सदा के लिए जीवित रहेंगे।"

ब्रह्मा ने उन्हें ऐसा ही वर दे दिया।

हिरण्य कश्यप को जब मालूम हुआ कि उसके पुत्रों ने उसकी उपेक्षा कर ब्रह्मा से वर प्राप्त किया है, इस पर नाराज़ हो उसने कहा—"तुम लोग पाताल में जाकर सदा निद्रा के वशीभूत हो चिरकाल रहो, तब देवकी के गर्भ से पैदा हो जाओ। पिछले जन्म में तुम्हारे पिता बने कालनेमि कंस के रूप में पैदा होकर जन्म के साथ ही तुम्हारा वध कर बैठेंगे।"

इसलिए हिरण्यकश्यप के शाप के कारण वे छठों देवकी के गर्भ से पैदा हुए और जन्म के साथ ही कंस के हाथों में मर गये।

इसके बाद देवकी सातवीं बार गर्भवती हुई, पर यह अफ़वाह फैल गई कि पाँचवें महीने में ही उसका गर्भस्त्राव हुआ है। इस पर कंस बड़ा खुश हुआ।

वास्तव में बात यह हुई कि योगमाया ने देवकी के गर्भ को रोहिणी के गर्भ में बदल डाला। थोड़े दिन बाद गोकुल में रोहिणी ने बलराम का जन्म दिया।

आठवीं बार देवकी ने गर्भधारण किया। इस बार उसके गर्भ में विष्णु थे, योगमाया भी उस गर्भ में पहुँची। इस बार कंस ने देवकी और वसुदेव को कारागार में बंदी बनाया।
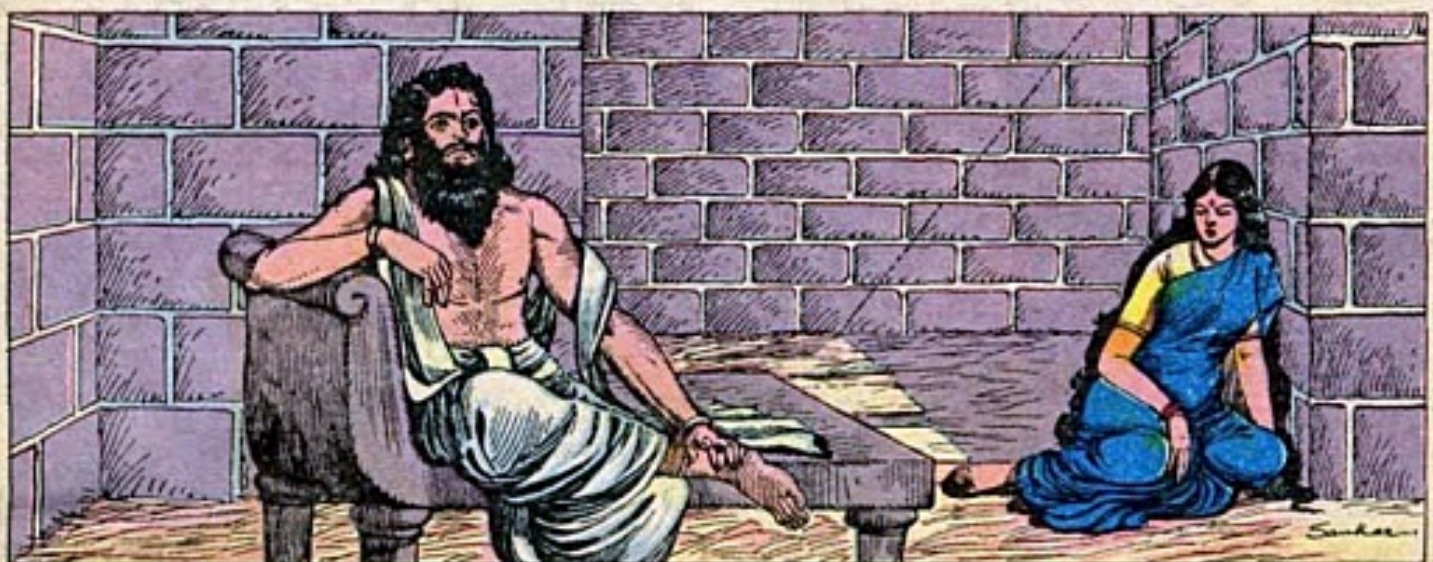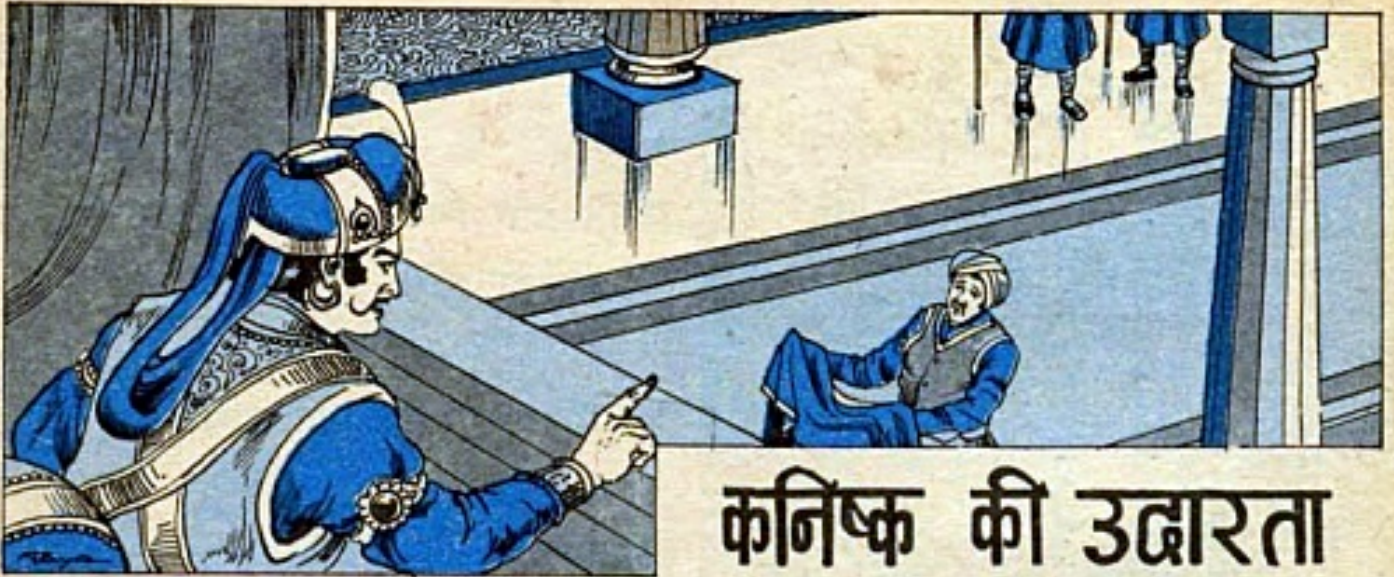
कनिष्क की उदारता

कई शताब्दियों के पहले कुशान वंशी राजा कनिष्क पुरुषपुर को राजधानी बनाकर उत्तर भारत पर राज्य करते थे। जनता में यह प्रतीति थी कि वे ईश्वर अंश से पैदा हुए हैं।

राजा कनिष्क दया-धर्म के लिए ही नहीं बल्कि वीरता और साहस के लिए भी प्रसिद्ध थे। उस समय के अनेक शक्तिशाली राजाओं को हराकर कनिष्क ने उन्हें अपने सामंत बना लिये थे। ऐसे राजाओं में कन्याकुब्ज के राजा एक थे।

राजा कनिष्क के जन्म-दिन के अवसर पर सामंतों के द्वारा उपहार भेजने की एक प्रथा थी। एक बार कनिष्क के जन्म-दिन पर कन्याकुब्ज के राजा ने उपहार के रूप में एक रेशमी वस्त्र भेजा।

राजा कनिष्क को जो उपहार पसंद आये, उनमें यह रेशमी वस्त्र भी एक था। राजा ने सोचा कि उस वस्त्र से एक अंगरखा बनवा ले तो बड़ा अच्छा होगा। इस विचार के आते ही राजा ने दर्जी को बुलवाकर एक हफ़्ते के अन्दर अंगरखा सीकर लाने का आदेश दिया।

दो हफ़्ते बीत गये, पर दर्जी अंगरखा सीकर नहीं लाया। इस पर राजा ने नाराज होकर दर्जी को पकड़ लाने का आदेश दिया। सिपाही उसी वक़्त दर्जी को राजा के पास खींच ले आये।

राजा ने दर्जी से देरी का कारण पूछा। इस पर दर्जी ने हाथ जोड़कर निवेदन किया—"महाराज! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। आप ने जो वस्त्र अंगरखा सीने के लिए मुझे दिया, उस पर दो चरणों के चिह्न बुने हुए हैं। वस्त्र को चाहे जिस ओर भी उलटकर सीये, वे चरण-चिह्न आप की पीठ पर आ जाते हैं। कृपया

२५ साल पहले की चन्दामामा की कहानी
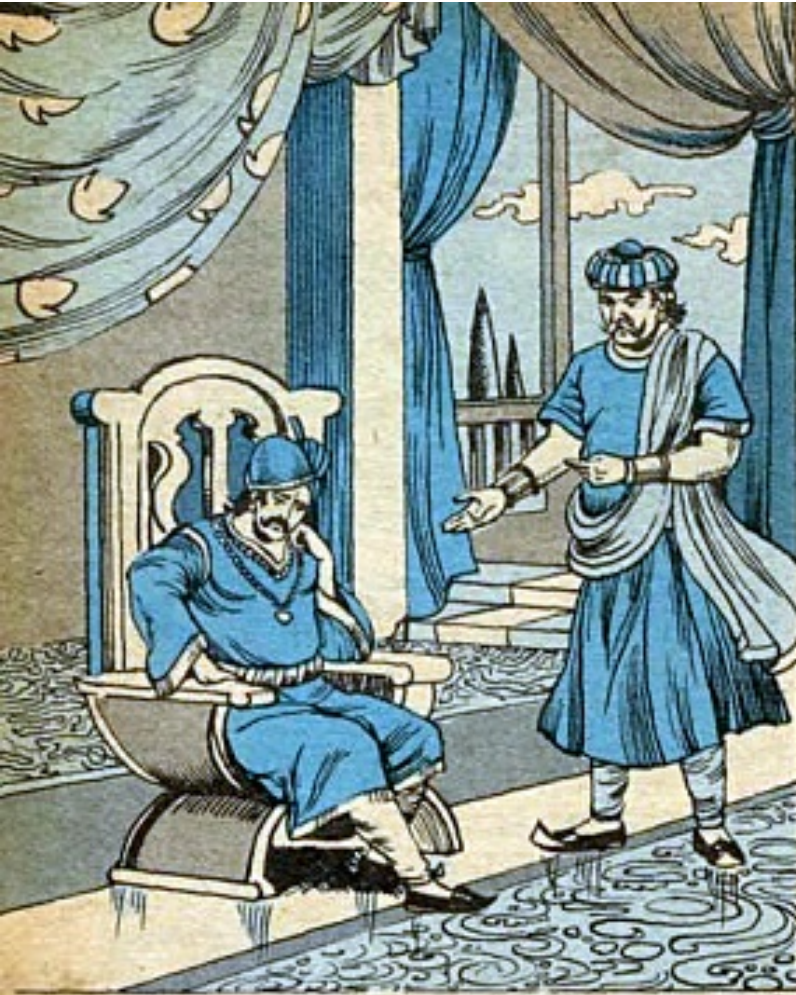
आप एक बार इस वस्त्र को परखकर देखिएगा।" इन शब्दों के साथ दर्जी ने वह रेशमी वस्त्र राजा के हाथ दिया।

कनिष्क को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने सावधानी से रेशमी वस्त्र को परखकर देखा, दर्जी की बात सच निकली। इस पर राजा का क्रोध और भड़क उठा।

"कन्याकुब्ज का सामंत मेरा ही अपमान करता है। में इसका घमण्ड तोड़ डालूंगा।" यों कहकर राजा ने अपने मंत्री और सेनापति को बुलवाकर मंत्रणा की। एक हफ़्ते के अन्दर सारी सेना को इकट्ठा कर कन्याकुब्ज पर हमला करने के लिए कनिष्क निकल पड़े।

कनिष्क के द्वारा हमला करने की बात कन्याकुब्ज के राजा को मालूम हो गई। उसने भांप लिया कि शक्तिशाली कनिष्क का सामना करना संभव नहीं है।

सामंत राजा ने अपने मंत्री से पूछा— "मंत्रीवर! कोई उपाय सोच लो।"

मंत्री ने समझाया—"प्रभू! मैंने पहले ही आप को आगाह किया था कि इस प्रकार का उपहार न भेजें। आप ने जान-बूझकर सोनेवाले नाग पर पैर रखा। यह खतरा चाहकर ही मोल लिया हुआ है।"

राजा ने स्वीकार सूचक सर हिलाकर कहा—"जो होना था, सो हो गया। अब चिंता करने से कोई फ़ायदा नहीं है। अगर हम बचने का कोई उपाय न करें तो हमारे राज्य और प्राण दोनों से हमें वंचित होना पड़ेगा।"

मंत्री थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब बोला—"महाराज! तब तो आप एक काम कीजिए! मुझ से 'क्यों?' यह सवाल पूछे बिना मेरे एक हाथ को कटवा दीजिए।"

मंत्री के मुंह से यह बात सुनकर कन्याकुब्ज का राजा चौंक पड़ा। एक विश्वासपात्र तथा राजभक्त मंत्री का अंगविच्छेद करना सामंत राजा को कतई

पसंद न था, पर लाचार होकर राजा ने बधिक को बुला भेजा और मंत्री का हाथ कटवा दिया।

एक हफ़्ते बाद मंत्री एक उत्तम नस्ल के घोड़े पर सवार हो कनिष्क की सेनाओं के सामने पहुँचा और कन्याकुब्ज की सीमा पर राजा कनिष्क से मिला।

"महाराज! मैं कन्याकुब्ज के राजा का मंत्री हूँ। उन्होंने आपका जो अपमान करने का प्रयत्न किया, उसे रोकने की कोशिश करके मैं उसका फल भोग रहा हूँ।" यों कहते मंत्री ने अपने लूले हाथ को कनिष्क को दिखाया।

कनिष्क ने मंत्री की सारी बातें सुनीं। उन्होंने सोचा कि मंत्री अपने राजा के द्वारा ही दण्ड पाया हुआ है और वह दण्ड भी उसी के कारण हुआ है।

"अच्छी बात है। मैं उस घमण्डी को उचित दण्ड दूंगा। जल्द ही मैं उसको यमपुरी में भेज दूंगा।" यों कनिष्क ने मंत्री को सांत्वना दी। मगर मंत्री इससे संतुष्ट नहीं हुआ। उसने कहा—"महाराज! हमारे राजा के साथ प्रतीकार लेने पर ही मेरे मन को शांति मिलेगी। आपके द्वारा आक्रमण करने का समाचार सुनकर राजा नगर को छोड़ भाग गये हैं, मैं जानता हूँ कि वे किस दिशा में जा

रहे हैं। हमें उसके मार्ग को रोककर बन्दी बनाना होगा।"

कनिष्क ने मंत्री की बात मान ली और पूछा—"अच्छी बात है, पर यह बताओ, कन्याकुब्ज राजा को कैसे बन्दी बनावे?"

मंत्री ने कहा—"महाराज, उन्हें बन्दी बनाने के लिए हमारे सामने दो ही मार्ग हैं। एक मार्ग से होकर जाने पर ठीक चालीस दिन लगेंगे और दूसरे मार्ग से हम एक हफ़्ते के भीतर वहाँ पहुँच सकते हैं। मगर यह मार्ग मुसीबतों से भरा हुआ है। हमें मैदान से होकर यात्रा करनी पड़ेगी। वहाँ पर हमें पानी की एक बूंद तक नहीं मिलेगी।"

कनिष्क थोड़ी देर तक सोचते रहे और दूसरे मार्ग से ही जाने का निश्चय कर लिया। यात्रा तो एक सप्ताह की थी, फिर भी दस दिन के लिए आवश्यक पानी और रसद का इंतज़ाम कराया। तब सेना के साथ मैदान-मार्ग से होकर यात्रा चालू की।

सेना मैदान के मार्ग से चल पड़ी। कहीं पेड़ और पौधों का नाम तक न रहा। पानी के निशान तक न थे। तिस पर दस दिन की यात्रा के बाद भी लक्ष्य का पता न था। दो दिन और बीत गये। रसद की बात अलग है, पर प्यास बुझाने के लिए पानी के अभाव में सैनिक परेशान होने लगे। दस दिन के लिए साथ लाये गये पानी व रसद चुक गये।

हालत को नाज़ुक देख कनिष्क ने कन्याकुब्ज के मंत्री को बुलाकर पूछा–"तुमने बताया कि हम एक हफ़्ते के अन्दर उस स्थान तक पहुँच सकते हैं, पर बारह दिन बीत जाने पर भी हम लक्ष्य तक पहुँच नहीं पा रहे हैं। क्या बात है?" इस पर मंत्री ने विकट हँसी हँसकर कहा–"महाराज! मैंने जान-बूझकर ही आप को यों धोखा दिया है। आपने तो हमारे राजा को यमपुरी में भेजने की प्रतिज्ञा की है। लेकिन अब आप ही को अपनी सेना के साथ यमपुरी में जाने का समय निकट आया है। यदि आप को आगे या पीछे भी जाना चाहे तो कम से कम बारह दिन लग जायेंगे। इसलिए पानी की एक बूंद तक न मिलनेवाले इस मैदान में गला सूखकर प्राण छोड़ने पड़ेंगे। इसका मूल कारण मैं हूँ। इसलिए इसी वक़्त मेरा शिरच्छेद करा दीजिए, तो भी मुझे कोई चिंता नहीं है। मेरे श्रम का फल मिल गया। मैंने अपने राजकार्य को ईमानदारी से संपन्न किया है।"

मंत्री के मुंह से ये शब्द सुनकर राजा कनिष्क निश्चेष्ट रह गये। पर दूसरे ही

फल में मंदहास करके बोले–"मंत्री, तुम्हारी राजभक्ति प्रशंसनीय है। पर लगता है कि तुम एक बात भूल गये हो। मैं ईश्वर के अंश से पैदा हुआ हूँ, यह बात कल्पित नहीं है। तुम्हीं खुद देख लो।" यों कहकर कनिष्क अपने घोड़े पर सवार हुए, ईश्वर प्रदत्त कुंत लेकर अकेले ही चल पड़े।

इसके बाद कनिष्क उस मैदान में एक दो कोस घूम आये। उन्हें एक स्थान पर सूखा हुआ एक बहुत बड़ा तालाब दिखाई दिया। राजा उसी वक़्त घोड़े से उतर पड़े। तालाब के बीच पहुँचकर जमीन में कुंत को गाड़ दिया। दूसरे ही क्षण जहाँ कुंत जमीन में गड़ गया था, उस स्थान से एक फौव्वारा फूट निकला और आसमान तक उठा।

तब राजा कनिष्क ने कहा–"मंत्री, तुमने अब मेरी शक्ति देख ली है न? अनावश्यक तुमने अपना अंग-विच्छेद करवा लिया, इस पर तुम्हें ही खुद चिंतित होना पड़ेगा।" मंत्री ने ये बातें सुन अपना सिर झुका लिया।

इसके बाद कनिष्क ने पुनः अपनी सेनाओं को इकट्ठा किया और कन्याकुब्ज जाने की तैयारी करने लगे। उस समय मंत्री ने उनके समीप जाकर निवेदन किया–"महाराज! अब मैंने समझ लिया कि आप ईश्वर के अंश से उत्पन्न व्यक्ति हैं। मेरे प्रति आपने जो उदारता दिखाई, वह अपूर्व है! ऐसी उदारता रखनेवाले आप जो कि ईश्वर के अंश से संपन्न हैं; क्या अज्ञानवश किसी अन्य राजा के द्वारा किये गये अपमान को सहकर उन्हें क्षमा नहीं कर सकते?" यों विनयपूर्वक निवेदन किया।

"हाँ, तुम ठीक कहते हो।" यों कहकर राजा कनिष्क ने अपनी सेना को अपनी राजधानी पुरुषपुर की ओर बढ़ने का आदेश दिया। इसके बाद मंत्री ने राजा कनिष्क से विदा ली, कन्याकुब्ज पहुँच कर यह शुभ समाचार अपने राजा को सुनाया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां दिसंबर १९७९ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Brahm Dev

Chandrapal Singh

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अक्तूबर १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अगस्त के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : दे दो कोई पैसा, दो पैसा !

द्वितीय फोटो : बिन श्रम के जीवन हो कैसा !!

प्रेषक : कु. दुलारी साहू, C/o यदुवंशनाथ साहू, मु. पो. खोपली, जिला : दुर्ग (म. प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

एक नयी ताजगी का अनुभव.
जिन्दगी का भरपूर मजा.
कुरकुरे, असोका ग्लूकोज मिल्क बिस्कुटों
का आनन्द लीजिए.
विद्युतीय नियन्त्रण से पूर्ण आधुनिक जर्मन
प्लान्ट में स्वास्थ्यकारी गुणों से निर्मित.
दिलकश और ताजे शक्ति से परिपूर्ण
आज ही अपने परिवार के लिए एक पैकिट खरीदिये!

हर पल
असोका
के साथ

BREEZE

असोका बिस्किट्स हैदराबाद आ. प्र.

असोका क्रेस्पो तथा क्रेस्पोक्रेक के निर्माता
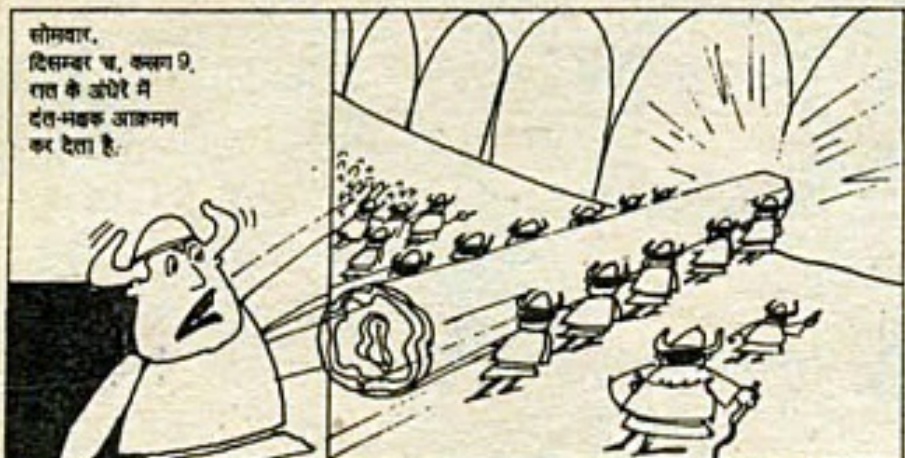
* कार्बोक्सिलिक एसिड ग्रुप का फार्मूला, जो दांतों के एनेमल को नष्ट करके, दांतों में दर्दनाक खोखले बनाता है.

DADDY
MUMMY
AND...
I
" ये सब मैंने अपने एको स्केच पेनसे बनाये हैं। "
EKCO
स्केच पेन
रंग ही रंग... जिनसे बच्चों को प्यार है. वे चाहते हैं—नित नये चित्र बनाना.
अपने बच्चों की सुप्त कला को प्रोत्साहन दीजिए... उन्हें एको स्केच पेन का आकर्षक सेट उपहारस्वरूप दीजिए.
ये कई मनपसंद रंगों में मिलते हैं.
EKCO
SKETCH PEN
FOR
SKETCHING
COLOURING • SIGNING
विलरक :
किरण एण्ड कंपनी,
७३/९, शामसेट स्ट्रीट, बम्बई ४०० ००२
फोन : ३२४४३२
एको स्केच पेन से लिखने का मज़ा ही कुछ और है.
ADVERTS/WP/216/HIN/38

ये हैं बच्चो राम और श्याम

जो बातें नयी बतायेंगे
कागज़ की सुन्दर-सुन्दर चीज़ें
बनाना तुम्हें सिखायेंगे

फिर-फिर फिरती फिरफिरी
ज़रूरी सामान: पतले कार्ड बोर्ड का चौकोर टुकड़ा, कैंची, कील या पिन, हथौड़ी, बटन, बांस की लकड़ी, पेंसिल, फुटपट्टी.
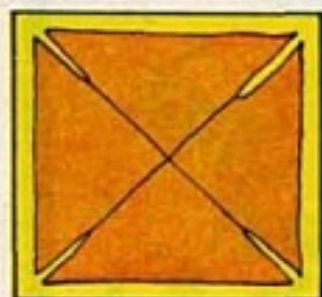
बनाने का तरीका:
पहले चौकोर कार्ड बोर्ड पेपर पर एक कोने से दूसरे कोने तक की दो तिरछी रेखाएं खींच लो. फिर उन रेखाओं पर से उसे बीच की तरफ ठीक आधी दूरी तक काटो. इस बात का ख्याल रखना कि वे आधी दूरी से कहीं ज़्यादा न कट जाए.

अब हर कोने को बीच की तरफ मोड़ो और सबको एक साथ पकड़कर पिन या कील उसमें इस तरह से चुभाओ कि नुकीला हिस्सा दूसरी तरफ निकल जाए.
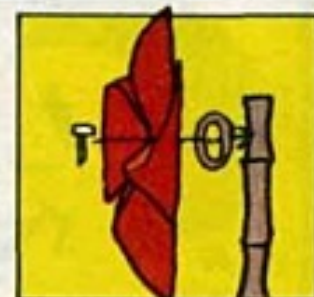
इसके बाद पिछली तरफ बटन पिरो लो और कील को बांस की लकड़ी में ठोंक दो. अब हवा का रुख देखो और फिरफिरी को फिरने दो. मज़ा आ जायेगा.

फलों के स्वादवाली गोलियां
रसीली... प्यारी... मज़ेदार

५ फलों के स्वाद—
रासबेरी, अननास,
नींबू, नारंगी व मोसंबी.